सेंटर आफ इंडियन ट्रेड यूनियंज

पांचवां सम्मेलन

अध्यक्षीय भाषण

बी० टी० रणदिवे

कानपुर
13-17 अप्रैल, 1983

साथियो,

मैं आपकी ओर से अपने उन नेताओं व साथियों की याद में श्रद्धांजलि अर्पित करता हूं जो अब हमारे बीच नहीं हैं.

एक असाधारण नेता, भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) के पोलिट ब्यूरो के सदस्य तथा सी पी आई (एम) की पश्चिम बंगाल राज्य कमेटी के सचिव कामरेड प्रमोद दासगुप्त के निधन पर शोक मनाने में मेरे साथ आप शामिल होंगे. हम अपने एक और असाधारण व प्रसिद्ध नेता, भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) के पोलिट ब्यूरो के सदस्य, इस पार्टी की तमिलनाडु राज्य कमेटी के सचिव तथा सीटू के एक शीर्ष नेता कामरेड ए. बालसुब्रह्मण्यम् के निधन पर भी शोक मनाते हैं.

समान दुख के साथ हम कामरेड लियोनिद ब्रेझनेव के निधन पर भी शोक मनाते हैं जो सोवियत संघ के अध्यक्ष थे तथा सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के सचिव थे और जिनकी विश्व कम्युनिस्ट आंदोलन में सबसे अधिक जिम्मेदाराना स्थिति थी. सभी देशों की जनता शांति के लिए उनके लगातार संघर्ष को सदा याद रखेगी. उनके नेतृत्व में सोवियत संघ ने आर्थिक उन्नति के नये आयाम कायम किए. भारत-सोवियत मित्रता लगातार विकसित होती रही और अंत में वह मित्रता की भारत-सोवियत संधि में बदल गई जिसने साम्राज्यवादी जोड़ तोड़, दबाव व साजिशों के खिलाफ संघर्ष करने के लिए हमारे देश को मजबूत बनाया.

हमारे संगठन के पिछले स्मरणीय सम्मेलन के बाद से हमने सीटू के अपने कई सदस्यों व नेताओं को खो दिया है; उनमें से अनेक पुलिस गोली के शिकार हुए और उनकी शहीदी मृत्यु हुई; हम उनके त्याग को याद करते हैं तथा उनकी याद में अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं.

स्वागत

साथियो, मैं आपकी ओर से विदेशों से आए अपने बिरादराना प्रतिनिधियों का स्वागत और अभिनंदन करता हूं. हमारे बीच सोवियत संघ, पीपुल्स चीन, वर्ल्ड फेडरेशन आफ ट्रेड यूनियंज व यूगोस्लाविया की ट्रेड यूनियनों के प्रतिनिधि मौजूद हैं.

हमने हमेशा भारत सरकार से अनुरोध किया है कि वह सभी समाजवादी देशों के साथ मैत्री संबंध विकसित करे. दुर्भाग्य से भारत-चीन संबंध कुछ समय के लिए खट्टे हो गए. हम अब प्रसन्न हैं कि संबंधों को सामान्य बनाने के लिए कदम उठाए जा रहे हैं.

साथियो, हम यह बहुत चाहते थे कि पाकिस्तान के ट्रेड यूनियन आंदोलन का एक प्रतिनिधि हमारे बीच होता. यह न उनका दोष है और न ही हमारा कि पाकिस्तान से कोई भी हमारे सम्मेलन में भाग नहीं ले रहा है. जनरल जिया भारत में शिखर सम्मेलन में भाग ले सकते हैं और तीसरी दुनिया की समस्याओं पर विचार कर सकते हैं. लेकिन पाकिस्तान की ट्रेड यूनियनों को भारत में मजदूरों के सम्मेलन में हिस्सा लेने की इजाजत नहीं है. लेकिन मार्शल-ला द्वारा संशोधित यही निर्गुट है.

मैं भारत के अपने बिरादराना संगठनों से आए बिरादराना प्रतिनिधियों का गर्मजोशी से स्वागत करता हूं.

पूंजीवादी विश्व का संकट

साथियो, हम पूंजीवादी प्रणाली के अभूतपूर्व संकट के दौरान मिल रहे हैं. यह संकट सबसे ज्यादा लंबे समय के लिए रहा है और हर कुछ महीनों के बाद पूंजीवादी विश्व के प्रवक्ता यह घोषणा करते हैं कि कुछ-न-कुछ बदल रहा है. लेकिन संकट जारी है. विकसित पूंजीवादी देशों में 3 करोड़ से भी ज्यादा व्यक्ति बेरोजगार हैं और ये देश अपनी कठिनाइयों के एक हिस्से को भारत सहित तीसरी दुनिया पर लादने की पूरी कोशिश कर रहे हैं. इस सबके अलावा साम्राज्यवादी अपनी प्रणाली के प्राचीन व बर्बर चरित्र को तब बेनकाब करते हैं जब वे अपनी संकट की स्थिति को हल्का करने के लिए जनसंहारी हथियारों पर अरबों डालर खर्च करते हैं. घातक हथियारों पर भारी मात्रा में अपने प्रसाधन खर्च करने के अलावा साम्राज्यवादी अपने संकट से छुटकारा पाने के लिए और कोई रास्ता नहीं पा सकते.

मार्क्स का विश्लेषण

कार्ल मार्क्स की मृत्यु शताब्दी वर्ष में भी, मार्क्स ने पूंजीवाद के बारे में जो कुछ लिखा सब कुछ सत्य निकल रहा है. उत्पादन की गहनता व केन्द्रीयकरण, लगातार संकट, समाज की उत्पादक ताकतों का विनाश, आरक्षित सेना में लगातार वृद्धि, उत्पादन की सामाजिक प्रणाली तथा निजी तरीके में मतभेद में तीव्रता जिससे अचानक सामाजिक धमाका हो

जाता है और वर्ग संग्राम — जो समाजवादी दुनिया के अस्तित्व से तीव्र हुए हैं — ये सब मार्क्स के विश्लेषण व निष्कर्षों के ठोस होने पर जोर देते हैं.

समाजवादी विश्व की महान प्रगति, इसकी आर्थिक उन्नत्ति, सुनियोजित अर्थव्यवस्था भी समाजवादी समाज व इसके तहत मानव प्रगति के बारे में मार्क्स ने जो कुछ कहा उसका सत्यापन करती हैं.

कम्युनिस्ट सिद्धान्तों के महान संस्थापक कार्ल मार्क्स की मृत्यु के बाद एक शताब्दी बीत गयी है. उनकी शिक्षाओं को इतिहास के विकास के दौरान परखा गया है और उन्होंने अपने गौरवमयी परिवर्तनात्मक चरित्र को साबित किया है. विश्व की सभी समाजवादी क्रांतियां यह स्वीकार करती हैं कि उनकी सफलता मार्क्स, एंगेल्स व लेनिन की क्रांतिकारी शिक्षाओं के कारण हुयी.

मार्क्स ने अपने स्मरणीय कार्य 'पूंजी' में पूंजीवादी समाज के नियमों का विश्लेषण करते हुए पूंजीवाद की अवश्यंभावी बर्बादी तथा समाज को समाजवाद में बदलने के लिए सामाजिक जरूरत को देखा. उन्होंने मजदूर वर्ग को सिखाया कि उसका शोषण व कष्ट तथा समूची मेहनतकश मानवता का कष्ट उत्पादन के सभी साधनों में से निजी सम्पत्ति को खत्म किए बिना तथा उनका समाजीकरण किए बिना खत्म नहीं होगा. इसी तरह समाजवाद ने गरीबी व बेरोजगारी से जनता को मुक्त करते हुए दुनिया के एक-तिहाई हिस्से पर कामयाबी हासिल की है जबकि पूंजीवादी दुनिया की मंदी, क्लोजर व बेरोजगारी से पीड़न जारी है.

मार्क्स ने मजदूर वर्ग को सिखाया कि समाजवादी क्रांति के बिना, पूंजीवादियों व अन्य समृद्ध वर्गों को राजनीतिक सत्ता से हटाये बिना, राजनीतिक सत्ता को मजदूर वर्ग द्वारा अपने हाथों में लिए बिना—सर्वहारा की तानाशाही—समाजवाद के लक्ष्य को पूरा नहीं किया जा सकता. सफलता की गारंटी के लिए मजदूर वर्ग को हमेशा अन्य मेहनतकशों के साथ मिलकर कार्य करना चाहिए. उन्होंने घोषणा की कि मुक्ति के लिए अपना संग्राम शुरू करने के लिये मजदूर वर्ग को संगठित करने के लिए यह जरूरी है कि मजदूर वर्ग की पृथक राजनीतिक पार्टी का निर्माण किया जाए. मार्क्स के कहने पर इन्टरनेशनल वर्किंगमेंज एसोशिएशन द्वारा अपनाया गया प्रस्ताव कहता है कि "समृद्ध वर्गों की सामूहिक शक्ति के खिलाफ अपने आप को एक पृथक राजनीतिक पार्टी में संगठित करके ही, जो समृद्ध वर्गों द्वारा निर्मित सभी पुरानी राजनीतिक पार्टियों के खिलाफ हो, सर्वहारा एक वर्ग के रूप में काम कर सकता है".

युद्ध का खतरा

यह कार्ल मार्क्स था जिन्होंने मजदूर वर्ग का प्रेरणात्मक आह्वान किया कि वह अपनी अन्तर्राष्ट्रीय शक्ति को एकजुट करे, सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयतावाद का झण्डा बुलन्द करे तथा पूंजीवादी शासक वर्गों द्वारा किए गये नाजायज हमलावर युद्ध का मुकाबला करे.

आज जब विश्व सोवियत संघ के खिलाफ, विश्व की समूची जनता के खिलाफ अमरीका द्वारा पैदा किए गये नाभिकीय युद्ध के खतरे का सामना कर रहा है, सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयतावाद की विरासत को और भी महत्व मिलता है. युद्ध की तैयारियों के लिए साम्राज्यवादी जन विनाश के हथियारों के उत्पादन पर अरबों डालर खर्च कर रहे हैं. वे इन हथियारों को आकाश में भी स्थापित करना चाहते हैं ताकि उन देशों पर जो अमरीका के आदेशों का विरोध करने की हिम्मत करें मृत्यु व विनाश की वर्षा की जा सके. वे नए विनाशकारी मिसाइलों को यूरोप में लगाना चाहते हैं ताकि सोवियत संघ की भूमि पर सीधे-सीधे वार किया जा सके. उन्होंने केवल उन हथियारों को विकसित किया है जो ऐसे नगरों को कुछ ही मिनटों में नष्ट कर सकें जिनमें लाखों लोग रहते हों.

पेंटागन ने अगले पांच सालों के लिए 1,600 अरब डालर का बजट तैयार किया है जिसका मतलब है कि इस दौरान हर रोज एक अरब डालर खर्च होगा. इसका नवीनतम संग्रामी आह्वान है कि "आओ और हमारे साथ व्यापार करो". हमें रीगन प्रशासन के युद्धोन्मादी दबाव की निंदा करनी चाहिए तथा इस रूझान के खिलाफ अपनी प्रतिरोधात्मक आवाज बुलंद करनी चाहिए.

सोवियत संघ द्वारा शांति के लिए प्रयास

अस्त्र दौड़ को खत्म करने तथा नाभिकीय हथियारों के उत्पादन को धीरे धीरे खत्म करने के संबंध में सोवियत संघ द्वारा पेश किए गए ठोस प्रस्तावों द्वारा शांति की ताकतों को भारी मदद मिली है. सोवियत संघ द्वारा इस एकतरफा घोषणा की कि यह नाभिकीय हथियारों को इस्तेमाल करने में सर्वप्रथम नहीं होगा अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर वर्ग व सभी शान्तिकामी ताकतों ने प्रशंसा की है. साथियो, हमें सोवियत संघ की सुप्रीम सोवियत तथा सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की उस अपील का पूरा समर्थन करना चाहिए जिसमें कहा गया है कि "हम युद्धनीतिक हथियारों को सीमित व कम करने

पर तथा यूरोप में नाभिकीय हथियारों को सीमित करने पर सोवियत-अमरीकी वार्ता के फौरी व फलदायक रूप से पूरा होने के और सेन्ट्रल यूरोप में सशस्त्र फौजों व हथियारों की कमी पर जल्दी से जल्दी एक समझौता होने के पक्षधर हैं; हम नाभिकीय परिक्षणों पर सम्पूर्ण व आम प्रतिबन्ध के लिए बिना किसी देरी के एक समझौता करने का प्रस्ताव रखते हैं ताकि नाभिकीय हथियारों की और किसी नयी प्रकार व किस्म को विकसित नहीं किया जा सके. हम रसायनिक हथियारों पर प्रतिबन्ध व उनको नष्ट करने का आह्वान करते हैं."

लेकिन साम्राज्यवादी इसको सुनने के मूड में नहीं है. वे इसका जवाब देने से इन्कार करते हैं तथा वे विश्व को नाभिकीय नर-संहार से ग्रस्त करने पर उतारू हैं.

शान्ति के लिए संघर्ष

यूरोप की जनता, अमरीका की जनता, समूचे विश्व की जनता शांति के लिए तथा युद्ध के खतरे के खिलाफ संघर्ष कर रही है. जनप्रिय दबाव प्रतिदिन बढ़ रहा है और युद्ध के ज्वार को पछाड़ रहा है.

साथियो, हमारी जनता की जिम्मेदारी व विश्व की जनता की जिम्मेदारी, सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रीयतावाद, यह मांग कर रही है कि नाभिकीय युद्ध को रोकने के लिए समूचे ट्रेड यूनियन आन्दोलन को सक्रियता से हस्तक्षेप करना चाहिए तथा जंगबाजों को बेनकाब व पृथक करना चाहिए और विश्व के मजदूर वर्ग व जनता के साथ अपनी आवाज बुलंद करनी चाहिए.

हमने पिछले साल 1 सितम्बर को युद्ध-विरोधी दिवस मनाया और फिर उसके बाद सी पी आई(एम), सी पी आई, आर एस पी, फारवर्ड ब्लाक, डी एस पी, व पीजेंट्स एण्ड वर्कर्स पार्टी द्वारा 4 अक्तूबर को दिल्ली में आयोजित विशाल शांति प्रदर्शन में हिस्सा लिया. आंध्र प्रदेश, केरल, पश्चिम बंगाल व त्रिपुरा में भारी प्रदर्शन किए गये. ये सब अच्छा है लेकिन केवल शुरूआत है.

लेकिन यह मानना होगा कि विभिन्न विचारधाराओं के प्रभाव में हमारे देश का ट्रेड यूनियन आन्दोलन मानव नरसंहार के खिलाफ इस महान संघर्ष में शायद ही अपनी भूमिका अदा कर रहा है. हम खुद इसमें कुछ पीछे थे. लेकिन ट्रेड यूनियन आन्दोलन में हमारे कुछ भागीदारों की स्थिति और भी खराब है. राष्ट्रीय अभियान समिति के सभी घटक युद्ध के खतरे तथा इसके स्रोतों के प्रति एकमत नहीं हैं कुछ इस तरह काम करते हैं जैसे साम्राज्य-

वाद का अस्तित्व ही न हो. युद्ध-विरोधी प्रचार में ज्यादा से ज्यादा हमारे साथी एटक व यूटीयूसी हैं. संक्षेप में अन्तर्राष्ट्रीयतावाद व युद्ध के खतरे के बारे में चेतना बिलकुल कम है. यह हमारा कर्तव्य है कि हम अपनी सभी यूनियनों तथा उनके पीछे लामबंद मजदूरों को सक्रिय बनाएं. लेकिन वे तो मजदूर वर्ग के एक हिस्से मात्र हैं. यह हमारी जिम्मेदारी है कि हम युद्ध-विरोधी आन्दोलन का नेतृत्व करते हुए अन्य केन्द्रीय संगठनों के मेहनतकशों को आकर्षित करें. हमें मजदूरों को चेतावनी देनी होगी कि युद्ध छिड़ने पर भारतीय चूल्हे व घर प्रभावहीन नहीं रहेंगे और कि उदासीनता का परिणाम अस्तित्व का ही मिट जाना या गुलामी हो सकता है.

साथियो, आप फिलिस्तीन की संघर्षरत जनता की सफलता के लिए कामना करने में, लेबनान के खिलाफ इज्राइली हमले की निन्दा करने में, और इज्राइल को समर्थन देने के लिए अमरीकी साम्राज्यवाद की भर्त्सना करने में मेरे साथ शामिल होंगे. हम सब तानाशाही व अमरीकी हस्तक्षेप के खिलाफ लेटिन अमरीका की जनता के संघर्षों और जातिभेद के खिलाफ स्वतंत्रता के लिए अफ्रीकी जनता के संघर्षों का समर्थन करते हैं. पश्चिमी साम्राज्यवादी शक्तियों द्वारा बार-बार धोखा दी गयी नामिबिया की जनता के साथ हमारी सहानुभूति है.

निर्गुट सम्मेलन

साथियो, पिछले महीने हमारे देश में सम्पन्न निर्गुट सम्मेलन एक महत्व-पूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय घटना थी. निर्गुट राष्ट्रों की हर बैठक विपक्षी ताकतों के, प्रगति की ताकतों व प्रतिक्रिया की ताकतों के, दबाव व प्रतिदबाव का एक अवसर बन जाती है. हमारे देश में बी जे पी जैसी ताकतें हैं जो सही निर्गुट के नाम पर प्रतिक्रियावादी दिशा में झुकाव चाहती थीं. देश के बाहर की भी ताकतें थीं जो मतभेद व विवाद को बढ़ाना तथा इस शक्तिशाली ताकत की एकता को कम करके आंकना चाहती थीं. लेकिन साम्राज्यवाद व तीसरी दुनिया के देशों के बीच स्वार्थों में बढ़ते विरोध, आर्थिक स्थिति, युद्ध के खतरे, तीसरी दुनिया के देशों की कामन कर्जदारी, साम्राज्यवादी शक्तियों की उन द्वारा कुछ को रिश्वत देकर अन्यों के खिलाफ भड़काने में नाकामयाबी और अन्ततः अनेक देशों में साम्राज्यवाद के खिलाफ जनप्रिय क्रोध के धीरे-धीरे बढ़ने ने राष्ट्रों को एकजुट कर दिया और मतभेदियों को अपने आप को मंद सुर में अभिव्यक्त करना पड़ा.

इसमें कोई शक नहीं कि दो महाशक्तियों के बारे में कुछ अवास्तविक चर्चा हुयी तथा यह साम्राज्यवादी हमलावरों व समाजवादी देशों के बीच भेद करने में नाकामयाबी ही थी. तो भी सभी प्रगतिवादी ताकतों को युद्ध व अस्त्रीकरण के खिलाफ तथा शान्ति व निरस्त्रीकरण के लिए शिखर सम्मेलन के आह्वान का समर्थन करना चाहिए. कर्ज से दबे देशों की मदद तथा एक नए आर्थिक तंत्र के लिए फौरी कदम उठाने के इसके आह्वान का सभी को समान समर्थन करना चाहिए. सभी को इसके तीसरी दुनिया के देशों के बीच समीपी आर्थिक सम्बन्धों के आह्वान का समर्थन करना चाहिए.

भारत सरकार की भूमिका

अफगानिस्तान, कंपूचिया, डियगो गार्शिया तथा हिन्द महासागर के बारे में अपनी स्थिति बनाए रखने के लिए भारत सरकार ने अच्छा कार्य किया. इससे देश के साम्राज्यवाद-विरोधी राष्ट्रीय हित प्रदर्शित होते हैं. साथ ही यह सहसूस किया जाना चाहिए कि तीन दशकों के कांग्रेसी निजाम ने साम्राज्यवाद-विरोधी चेतना को मार दिया है और कटिबद्ध विश्व के प्रस्ताव व परिणाम हमारी जनता में मामूली लहर भी पैदा नहीं करते. स्वयं मजदूर वर्ग का बहुत बड़ा हिस्सा भी इससे बहुत ही कम प्रभावित होगा. जब तक साम्राज्यवाद-विरोध को जनता की, आम जनता की सम्पत्ति नहीं बनाया जाता, तब तक निर्गुट आन्दोलन की वास्तविक ताकत महसूस नहीं की जा सकती. कितने राष्ट्राध्यक्ष ऐसा कर सकते हैं ? हमने देखा है कि जहां भारत सरकार डियगो गार्शिया के बारे में कहने में स्वतन्त्र है वहां यह देश के अन्दर साम्राज्यवादी साजिशों पर चुप है. यह स्पष्ट है कि जबतक पश्चिम पर देश की बढ़ती आर्थिक निर्भरता को खत्म नहीं किया जाता और ग्रामीण इलाकों में पूंजीवाद-के-पूर्व के सम्बन्धों की विरासत को खत्म नहीं किया जाता तबतक देश निर्गुट नीति के सभी फलों को महसूस करने में अयोग्य रहेगा.

फिर भी शिखर-सम्मेलन ने निर्गुट आन्दोलन की प्रगति में एक महत्व-पूर्ण अवस्था कायम की है. इसने आंतरिक एकता की जरूरत पर जोर दिया तथा विघटनकारियों को करारी शिकस्त दी. साथ ही इसने साम्राज्यवादियों को चेतावनी दी कि विश्व उनकी साजिशों के प्रति तेजी से सजग हो रहा है और वे दिन जब दुमछल्ले शासकों की मदद से स्थिति में आसानी से जोड़तोड़ किया जा सकता था अब खत्म होने को आ रहे हैं.

बहुराष्ट्रीय कंपनियों के खिलाफ संघर्ष

विकसित पूंजीवादी देशों में बहुराष्ट्रीय कंपनियों के खिलाफ संघर्ष तेज हो रहा है और ऐसी हड़तालें हुई हैं जिनमें विभिन्न देशों के बहुराष्ट्रीय कंपनियों के मजदूरों ने एक साथ हिस्सा लिया. बहुराष्ट्रीय कंपनियों के खिलाफ संघर्ष ने एकता व अंतर्राष्ट्रीय एकजुटता के लिए भावना भर दी है. हमारे देश का ट्रेड यूनियन आंदोलन बहुराष्ट्रीय कंपनियों की घिनौनी भूमिका के प्रति अभी चेतन नहीं है. दवा उद्योग के क्षेत्र कर्मचारियों के संगठन एफ एम आर ए आई ने दवा उद्योग में बहुराष्ट्रीय कंपनियों के खिलाफ संघर्ष में कुछ मानक स्थापित किए हैं. हमें अपने सदस्यों को शिक्षित करने के लिए कुछ कदम उठाने चाहिएं ताकि बहुराष्ट्रीय कंपनियों के खिलाफ संघर्ष को ठीक तरह से आगे बढ़ाया जा सके.

चुनाव परिणाम

साथियो, और अधिक बिगड़ी हुई आर्थिक स्थिति, असम व पंजाब में फूटपरस्त ताकतों के और बाकी देश में सांप्रदायिक व अन्य ताकतों के हमलों के दौरान जनसमुदाय, हालांकि यह प्रायः ध्यान हटाने वाली राजनीति का शिकार होता है, कांग्रेस (आई) सरकार की जन विरोधी नीतियों के खिलाफ संघर्ष पर जोर दे रहा है. त्रिपुरा, आंध्र प्रदेश व कर्नाटक राज्यों में कांग्रेस (आई) की निर्णायक शिकस्त इस साल के आरंभ की एक असाधारण घटना है. आपकी ओर से मैं कांग्रेस (आई) व इसके पृथकतावादी साथी के खिलाफ सी पी आई (एम) के नेतृत्व में त्रिपुरा के वाममोर्चे की विजय का हार्दिक अभिनंदन करता हूं. कांग्रेस (आई) ने न केवल पृथकतावादी जनजाति गुट से गठबंधन किया बल्कि इसने आनन्द मार्ग व आमरा बंगाली जैसे प्रतिक्रियावादी संगठनों के साथ भी गठबंधन किया. लेकिन मतदाताओं ने उनको निर्णायक शिकस्त दी. त्रिपुरा में वाममोर्चे ने दिखा दिया है कि किस प्रकार देश की एकता की रक्षा की जाती है, जनता के जनवादी अधिकारों को कैसे बढ़ाया जाता है और जनवादी व धर्मनिरपेक्ष बुनियाद पर किस प्रकार से हमारी जनता के विभिन्न घटकों को एकजुट रखा जाता है. पृथकतावादियों द्वारा कत्ल-अभियान किए जाने के तथा कांग्रेस (आई) पार्टी द्वारा गुंडा गिरोहों को फैला देने के बावजूद वाम मोर्चे को एक निर्णायक जनादेश मिला है. एक ही साल में यह दूसरी बार है कि खुले चुनावी संग्राम में सी पी आई (एम) ने नेतृत्व में वामपंथी ताकतों ने कांग्रेस (आई) पार्टी को निर्णायक शिकस्त दी.

कांग्रेस (आई) के भ्रष्ट शासन के खिलाफ, इसकी जन विरोधी नीतियों के खिलाफ और आर्थिक शोषण द्वारा पैदा की गई पीड़ाओं के खिलाफ जनता का असंतोष आंध्र प्रदेश में इस सीमा तक पहुंच गया था कि इसके परिणाम-स्वरूप एक नई पार्टी तेलुगु देशम् के हाथों शासक पार्टी को अभूतपूर्व व खिल्ली भरी शिकस्त मिली. आंध्र प्रदेश की जनता, ग्रामीण जनता ने कांग्रेस (आई) निजाम के प्रति अपनी जबरदस्त अस्वीकृति व्यक्त की है और वे उम्मीद करते हैं कि नया प्रशासन उनके हितों के प्रति सजग रहेगा. आंध्र प्रदेश की जनता के हाथों कांग्रेस (आई) को मिली इस शिकस्त का जहां हम स्वागत करते हैं वहीं हम राज्य के मजदूर वर्ग केंद्रों द्वारा किए गए मतदान के तरीके पर चिंता भी व्यक्त करते हैं. अनेक एकजुट अभियानों और विभिन्न मुद्दों पर किए गए प्रदर्शनों व संयुक्त हड़तालों के बावजूद मजदूर वर्ग वामपंथी व जनवादी दृष्टिकोण वाले ट्रेड यूनियन नेताओं को चुनने में नाकामयाब रहा तथा तेलुगु देशम की आम लहर में बह गया. इस लिए ट्रेड यूनियन आंदोलन को अपनी सतर्कता जारी रखनी चाहिए और जनता की समस्याओं के समाधान के लिए नए प्रशासन को मदद देने में अपनी तैयारी व्यक्त करते हुए इसे जहां कहीं भी जनता के हितों की रक्षा न हो रही हो एकजुट होकर काम करना चाहिए.

कर्नाटक के चुनाव की घटनाएं भी समान रूप से चकाचौंध करने वाली हैं जहां कांग्रेस(आई) अपना बहुमत खो बैठी है और जनता पार्टी के नेतृत्व में एक नये मन्त्रिमण्डल ने प्रशासन संभाल लिया है. एक बार फिर कर्नाटक की जनता ने, जिसने कांग्रेस(आई) निजाम के तहत भ्रष्टाचार, दमन, जनवादी अधिकारों पर हमलों तथा आर्थिक पीड़ाओं का अनुभव किया, उस पार्टी को उखाड़ फेंका है.

हमारे देश के लिए इन चुनावों के परिणाम विशाल राजनीतिक महत्व रखते हैं और इनसे एक घटनाक्रम शुरू होने की सम्भावना है जिससे जनता में कांग्रेस(आई) का प्रभाव और कम होगा तथा उस पार्टी का और विघटन होगा, क्योंकि यह बिलकुल स्पष्ट है कि कांग्रेस(आई) के बारे में वह भ्रम जो 1980 में इसे फिर से सत्ता में लाया था खत्म हो रहा है. आंध्र प्रदेश व कर्नाटक ने जो पिछले 30 वर्षों से कांग्रेस(आई) के साथ रहा है अब इस पार्टी को अस्वीकार कर दिया है. दक्षिण में गढ़ गिर गया है, केरल मन्त्रिमण्डल तो केवल साम्प्रदायिक व जातिवादी संगठनों की दया पर ही टिका हुआ है. यह देखा गया है कि जनता से अपने बढ़ते अलगाव के साथ-साथ इन्दिरा गांधी इस कद्र गिर जाती हैं कि वह किसी भी प्रतिक्रियावादी

पृथकतावादी ताकत के साथ, जैसा कि त्रिपुरा या केरल में हुआ, अपना गठबन्धन कर लेती हैं.

यही समय है कि ट्रेड यूनियन आन्दोलन आपसी मशविरा करे व कांग्रेस(आई) के खिलाफ अपनी पूरी ताकत लगा दे तथा वामपंथी व जनवादी ताकतों की आगे उन्नत्ति के लिए मदद करे और अपने आप को और अधिक मजबूत बनाए. आंध्र प्रदेश व कर्नाटक का अनुभव यह बताता है कि जनवादी संघर्ष में यदि ट्रेड यूनियन आन्दोलन व मजदूर वर्ग सक्रिय तथा चेतन न हो तो जनता का असंतोष वामपंथी पार्टियों को छोड़कर अन्य पार्टियों के गिर्द केन्द्रित होता है. इसकी गारंटी के लिए कि संकट के आगामी दिनों में जब जनता कांग्रेस(आई) को छोड़ रही होगी व नये नेतृत्व की तलाश कर रही होगी, उनका असंतोष वामपंथ की तरफ आकृष्ट किया जाए, एकजुट ट्रेड यूनियन आन्दोलन की पहलकदमी की जरूरत है. इसके बिना जनता उन पार्टियों के बीच झूलती रहेगी जिनका वर्ग दृष्टिकोण भिन्न नहीं है.

असम में पृथकतावादी धमकी

साथियो, एक और चुनाव हुआ है तथा कांग्रेस(आई) भारी बहुमत से विजयी हुयी है और इसके कारण विश्व में इसका मजाक उड़ा है. मैं असम के चुनावों का उल्लेख कर रहा हूं जिनकी गाथा है खून, आगजनी, निर्दोष व्यक्तियों का संहार और मेहनतकशों के खिलाफ मेहनतकशों का होना. न तो इस देश की भूतपूर्व अभिशप्त ब्रिटिश सरकार और न ही रूस की जारवादी सरकार अपने संगठित नरसंहार में इतनी सफल रही हैं.

यदि देश की एकता को बनाए रखना है तो हमारी ट्रेड यूनियनों को असम की खून से भरी कहानी के पाठों को पूरी तरह से समझ लेना होगा. असम में क्या हो रहा है ? यह कहा जाता है कि मुख्य सवाल असम में बंगलादेश से आए विदेशी नागरिकों से सम्बन्धित है, यह कहा जाता है कि मुख्य सवाल यह है कि मतदाता सूचियों में से इन विदेशी नागरिकों के नाम हटा दिए जाएं ताकि असम की जनता विदेशी मतों से अप्रभावित स्वतंत्र व न्याय्य चुनावों को पा सके.

इसमें कोई शक नहीं कि विदेशी नागरिकों का सवाल है. लेकिन इसे दूसरे लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए जानबूझकर जरूरत से बहुत ही ज्यादा बढ़ा चढ़ाकर व्यक्त किया जाता है. विदेशी नागरिकों के सवाल के समाधान के

नाम पर अब सभी गैर-असमी भाषी भारतीय नागरिकों को उन सबको जो बरसों से असम में रहे हैं या जिन्होंने भारतीय कानून के तहत भारतीय नागरिकता ले ली है असम से निकाले जाने की मांग की जा रही है. विदेशी नागरिकों के भारी संख्या में आने से लड़ने के नाम पर असम में भारतीय नागरिकता को इंकार करने तथा असम के पृथक अस्तित्व को बढ़ावा देने के लिए यह एक चतुर कदम है. आंदोलनकारी दिखा यह रहे हैं कि वे विदेशी नागरिकों के आने के खिलाफ देश की रक्षा करने के लिए असम में भारतीय नागरिकों के अधिकारों के लिए संघर्ष कर रहे हैं. लेकिन वास्तविकता यह है कि वे विदेशी नागरिकों के रूप में सभी गैर-असमी भाषी लोगों को बाहर निकालना चाहते हैं.

भारत को यह स्पष्ट पृथकतावादी धमकी है और भारत की जनता इस खतरे को समसूस नहीं करती. बुर्जुवा समाचार पत्र छल व कपट के इस खेल को बनाए रखते हैं तथा कई बुर्जुवा विपक्षी पार्टियां भी इसमें शामिल है. मेहनतकशों के बीच तथा विभिन्न भाषा बोलने वाले व्यक्तियों के बीच द्वेष की भावना पैदा की जाती है. असम एक संयुक्त राज्य है जिसमें असमी व बंगला भाषी जनता और जनजाति, नेपाली व अन्य रहते हैं. यहां भारी तादाद में बंगाली मुसलमान व हिंदू भी हैं. एक बड़ी संख्या में बंगाली मुसलमान करीब आधा शतक पहले पूर्वी बंगाल (अब बंगलादेश) से जो उस समय भारत का ही एक हिस्सा था, असम में आए थे. वे भूख से पीड़ित किसान थे और भूमि की तलाश कर रहे थे. विभाजन व बंगाल-पाक युद्ध के बाद एक बड़ी संख्या में भयभीत व अत्याचारों से पीड़ित हिंदू बंगाली शरणार्थियों के रूप में असम आए और इस दौरान नागरिकता का दर्जा हासिल कर लिया. भारत सरकार व बंगलादेश सरकार के बीच एक अंतर्राष्ट्रीय समझौता भी था कि जो व्यक्ति बंगलादेश से 1971 के बाद यहां आए उन्हें वापिस बंगलादेश ले जाया जाएगा. इसको मध्येनजर रखते हुए आंदोलनकारियों के सामने यह प्रस्ताव रखा गया कि 1971 को सीमा वर्ष माना जाए तथा जो उसके बाद असम आए होंगे उनके नागरिकता अधिकारों की जांच की जाएगी. यदि वे बिना नागरिकता के पाए गए तो उनके नाम मतदाता सूची से हटा दिए जाएंगे. उन्हें भारत से बाहर या अन्य राज्यों में भेजा जा सकता है. और यह भी प्रस्ताव रखा गया कि आगे घुनपैठ को रोकने के लिए सरकार द्वारा हर कदम उठाया जाना चाहिए.

असम में सभी भारतीय नागरिकों के अधिकारों की गारंटी के लिए यह एक उचित प्रस्ताव था. इसे स्वीकार करने में तथा विदेशी नागरिकों की

समस्या का समाधान करने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए थी. लेकिन इसे एकदम अस्वीकार कर दिया गया क्योंकि आंदोलनकारी असम से सभी अल्पसंख्यकों का मुख्यतः बंगाली-हिंदू व मुसलमानों का सफाया करना चाहते हैं.

इसलिए यह ठीक ही प्रस्तावित किया गया कि जनता के आदेश को प्राप्त किया जाए. इसका विकल्प था राष्ट्रपति शासन को अर्थात् इंदिरा शासन को जारी रखना.

ज्यादा से ज्यादा, जनता में अपनी जनशक्ति प्रदर्शित करने का प्रदर्शनकारियों के लिए यही वक्त था.

लेकिन आन्दोलनकारी भी जानते थे कि असमी भाषी जनता पर भी उनका सम्पूर्ण नियंत्रण नही है. वामपंथी पार्टियों के नेतृत्व में जनता के बड़े हिस्से उनकी विघटनकारी व पृथकतावादी चाल के विरोधी थे. इसलिए उन्होंने चुनावों का बहिष्कार करने और अपने बहिष्कार को आतंकवादी नीतियों तथा अल्पसंख्यकों को अपना चारा बनाने व भारत-विरोधी घृणा फैलाने के प्रचार द्वारा लागू करने का फैसला किया. बाद में इन लोगों ने बिना किसी पश्चाताप के इस मुद्दे को अन्तर्राष्ट्रीय बनाने की कोशिश की, निर्गुट सम्मेलन से अपील की और भारतीय जनता व एकता के खिलाफ विदेशी सहायता मांगी. बी जे पी, जनता व लोकदल जैसी बुर्जुवा विपक्षी पार्टियों द्वारा उनका समर्थन किया गया. ये पार्टियां जब खुलेआम चुनावों व जनता के आदेश का विरोध करती हैं तो किस प्रकार के जनवाद का प्रतिनिधित्व करती हैं ? आमतौर पर ये पार्टियां जनवादी सिद्धांतों के प्रति भक्ति का पाठ पढ़ाने में बहुत जोर-जोर से चिल्लाती हैं. लेकिन असम में उन्होंने मुद्दों पर फैसला करने का जनता के अधिकारों का खुलेआम विरोध किया. जब वे जनता के मत देने के अधिकार को वीटो करने के लिए एक हिस्से का समर्थन करते हैं तो वे कौन से जनवादी सिद्धान्त का समर्थन करते हैं ? चुनावों में एक बड़ी संख्या में चुनाव क्षेत्रों में हास्यास्पद मतदान आतंक का नतीजा था न कि जनता द्वारा स्वयं व इच्छा से बहिष्कार.

हालांकि संवैधानिक दृष्टि से चुनाव जरूरी थे लेकिन इसने स्थिति को बदला नहीं है. आन्दोलनकारी अपनी पृथकतावादी गतिविधियां चला रहे हैं. असम की जनवादी जनता के—असमी भाषी जनता तथा बंगाली व अन्य अल्पसंख्यकों के—केवल एकजुट विरोध द्वारा ही उनके खिलाफ लड़ा व उनको नियंत्रित किया जा सकता है. कांग्रेस(आई) सरकार प्रशासनिक

कदमों के माध्यम से इस चुनौती का सामना करने में कभी कामयाब नहीं हो सकती.

असमी-भाषी जनता का बड़ा हिस्सा आन्दोलन का समर्थन कर रहा है. वे कट्टरपंथी रट के शिकार हैं. पूंजीवादी रास्ते के तहत भारत के बाकी हिस्से की तरह असम की जनता, असमी-भाषी जन-जाति के लोग, बंगाली, सभी गरीबी, बेरोजगारी से पीड़ित हैं. तीस साल का कांग्रेसी निजाम कोई सुधार नहीं लाया है. अब उनके रोष को एकता-विरोधी व अल्पसंख्यक-विरोधी मार्ग पर निर्देशित किया जा रहा है—मजदूर वर्ग व भारत की जनवादी ताकतों के लिए यह एक सबक है. मजदूर वर्ग को यह समझना चाहिए कि कट्टरपंथी आन्दोलन उनकी वर्ग एकजुटता व एकता को न केवल असम में बल्कि समूचे देश में कम करके आंकता है. यह पहली बार नहीं है कि मजदूरों की पांतों को विभाजित करने के लिए भाषायी आवेश के आधार पर कट्टरपंथी व क्षेत्रीय अपीलें की गयी हैं मेहनतकशों को मेहनतकशों के खिलाफ खड़ा करके असम में यह चरमसीमाओं तक पहुंच गयी है.

अमरीकी हाथ

यह स्थिति अमरीकी एजेंसियों द्वारा पूरी तरह इस्तेमाल की जा रही है जो भारत को कमजोर तथा विघटित करना चाहती हैं. इस मामले में अमरीकी हाथ को छिपाने के लिए इन्दिरा कांग्रेस, बी जे पी, जनता, लोकदल व भारतीय समाचार-पत्र एक विश्वासघाती साजिश में शामिल हुए हैं. लेकिन यह सब जानते थे कि भारत में अमरीकी राजदूत असम में खास दिलचस्पी ले रहे थे, इस राज्य के बार-बार दौरे कर रहे थे और आन्दोलन के नेताओं से परस्पर गुप्त बातचीत कर रहे थे. यह भी सब जानते थे कि विदेशी एजेंसियों ने आन्दोलन को आर्थिक प्रसाधन उपलब्ध कराए.

'प्रोजेक्ट ब्रह्मपुत्र के नाम का 1 जून 1979 का यू एस आई एस (अमरीकी सूचना सेवा) दस्तावेज जो हाल ही में पकड़ा गया यह दर्शाता है कि इस क्षेत्र में अमरीकी एजेंसी किस तरह से पृथकतावाद को प्रोत्साहन देने के लिए कार्य कर रही है. यह कहता है कि "राज्य विभाग की अनुमति से, जार्ज वाशिंगटन विश्वविद्यालय के विशेष कृति अनुसंधान कार्यालय ने भारत में अमरीकी सज्जा को सिक्किम व भूटान सहित भारत के पूर्वी

राज्यों में समाज-वैज्ञानिक अनुसंधान करने में सहायता करने के लिए लिखा है, जिसका लक्ष्य यह स्थापित करने के लिए कि किस हद तक मौजूदा राज्य स्वीकार्य हैं या एक नये राज्य की स्थापना के लिए उनका संकेत एक मौजूदा समस्या है, इन क्षेत्रों में जनमत पर प्रकाश डालना है." पृथकतावादी गतिविधियों में क्रिश्चियन मिशन भी शामिल थे. वर्ल्ड बापटिस्ट अलायंस के एसोसिएट डा० कनवैल ने 1978 में मिशनरी सोसाइटियों का आह्वान किया कि वे क्रिश्चियनिटी के प्रचार के लिए पृथकतावादी विचारों को प्रोत्साहन दें. थाईलैण्ड के राजदूत ने भी यह याद करते हुए अचानक असम का दौरा किया कि आठ सौ वर्ष पहले उसके देशवासी अहीम वंश की स्थापना के लिए असम पहुंचे थे. वे विशेष सम्बन्ध जिनकी वजह से थाईलैण्ड सरकार अमरीका के साथ बंधी है भली-भांति पता हैं. अमरीका के हमलावर हितों की रक्षा करने के लिए हेम सेमरिन सरकार का विरोध करने में थाईलैण्ड सबसे आगे है.

और अंत में संयुक्त राष्ट्र में अमरीकी राजदूत जीन किर्कपैट्रिक द्वारा वितरित बदनाम दस्तावेज की बारी है. इसमें निम्नलिखित विचार व्यक्त किए गए हैं ताकि अमरीकी इरादों के बारे में किसी का कोई शक बाकी न रह जाए. "भारत की कमजोरी गरीबी रूपी विशिष्ट रोग के अलावा इसकी अनेक समाधानरहित घरेलू व अंतर्राष्ट्रीय समस्याएं हैं. पृथकतावादी आंदोलन की इस हद तक वृद्धि नोट करने योग्य है कि भारत में जातियों को आपसी विद्वेषी बनाने की वास्तविक संभावना है जो तीसरी दुनियां व अन्यत्र इसके प्रभाव को नष्ट कर देगी."

शासक पार्टी की भूमिका

क्या शासक पार्टी ने इस खतरे को उखाड़ फेंकने के लिए जनता को विश्वास में लिया ? क्या इसने असम की घटनाओं के पीछे घिनौने हाथ के बारे में भारतीय जनवादी जनमत को चेतावनी दी? क्या बुर्जुवा-जमींदार पार्टियों ने आने वाले खतरे के बारे में जनता को चेतावनी दी? क्या बुर्जुवा समाचार पत्रों ने जो अपना स्वतंत्रता का प्रदर्शन करते हैं तथा लक्ष्यात्मक रूप से देश के साथ खड़े हैं भारत के नए विभाजन की इस चाल के खिलाफ जनता को जागृत किया?

इन सब एजेन्सियों ने जनता के साथ विश्वासघात किया. शासक पार्टी सबसे बड़ी अपराधी है. इसकी आर्थिक व वर्ग नीतियों ने असम की जनता को आशाहीन कर दिया तथा इसको कट्टरपंथियों के जाल में फेंक दिया. इस

कट्टरपंथी घटनाक्रम के खिलाफ अपने प्रभाव को लामबंद करने की बजाय सिवाए प्रशासनिक कदमों, पुलिस दमन, गोलीबारी, आदि के इसने कुछ नहीं किया. मतों की प्राप्ति के लिए इसने खुलेआम सांप्रदायिक भावनाओं से अपील की और उत्तेजक दंगों में सहयोग दिया. कांग्रेस (आई) पार्टी तथा केंद्र में बुर्जुवा-जमींदार सरकार ने राष्ट्रीय एकता की रक्षा करने में व देश को एकजुट रखने में अपने आपको अयोग्य साबित किया. निर्गुट सम्मेलन में व्यक्त की गई साम्राज्यवाद विरोधी भावनाएं तब हवा में उड़ जाती हैं जब अपने ही घर में साम्राज्यवादी साजिशों के खिलाफ लड़ने का सवाल हो. यदि शासक पार्टी पृथकतावादी कट्टरपंथियों के खिलाफ जनता से अपील करने का तथा जनवादी मत संग्रह करने का फैसला करती है तो असम की वाम-पंथी ताकतों व पार्टियों द्वारा एकता के लिए किया जा रहा संघर्ष मजबूत होगा. लेकिन कांग्रेस (आई) के लिए तो वामपंथी ताकतों के मजबूत होने व उनकी उन्नति होने से तो अच्छा राष्ट्रीय एकता का धराशायी होना है. इंदिरा गांधी ने आर्थिक नीतियों व जनवाद के खिलाफ अधिनायकवादी हमलों के अपने अनेक अपराधों के साथ सरताज अपराध जोड़ा है—राष्ट्रीय एकता की सभी समझ का धराशायी होना.

बुर्जुवा विपक्षी पार्टियां

बी जे पी. जनता व लोकदल के आपराधिक अवसरवाद का तो कोई मुकाबला ही नहीं. बी जे पी व जनता पार्टी एएएसयू (आसू) के कट्टर-पंथ का, अमरीकी साजिशों का, जबरदस्त समर्थन करते रहे और यह साबित करते रहे कि पृथकतावादी संघर्ष असम के परिचय को पहचाने के लिए संघर्ष है, अवश्य ही इस काम में वे अमरीकी एजेंसियों के साथ थे. उन्होंने कट्टरपंथियों के हर अवरोधी कदम का समर्थन किया, उन्होंने बंगालियों, मुसलमानों, हिंदुओं, आदि की हत्याओं की निंदा नहीं की. बी जे पी ने घोषणा की असम के सभी मुसलमान घुसपैठिये हैं यानि विदेशी हैं. अपने मुसलमान विरोधी संप्रदायवाद के प्रति भक्त, उन्होंने आंदोलनकारियों द्वारा किए गए हर आतंकवादी कार्य की रक्षा की. अमानवीय नेली नरसंहार के खिलाफ जिसमें सैकड़ों मुसलमान किसानों की हत्या कर दी गई थी निंदा करने के लिए उनमें से किसी ने भी एक शब्द नहीं कहा. उन सबने सोचा कि भविष्य में चुनावी लाभ हासिल करने के लिए यह एक अच्छा अवसर था. ऐसे लोगों से ये पार्टियां बनी हैं.

वामपंथ की आवाज

यह हिस्सा जो देश के प्रति ईमानदार रहा और जिसने अपने देशभक्त कर्त्तव्य निभाए इसका प्रतिनिधित्व सी पी आई(एम), सी पी आई, अन्य वामपंथी दलों, कांग्रेस(एस) और सीटू, एस एफ आई, किसान सभा व एटक जैसे अन्य जन-संगठनों ने किया. सी पी आई(एम), सी पी आई व अन्य वामपंथी पार्टियों तथा उनके जन-संगठनों ने जनवादी ताकतों को एकजुट रखने व राष्ट्रीय एकता की रक्षा करने के लिए असमी भाषी जनता, बंगालियों व अन्य अल्पसंख्यकों के बीच लगातार संघर्ष किया. हमारे सीटू के कई कामरेड, मजदूर व ट्रेड यूनियन नेता मारे गए हैं. हमारी एस एफ आई के कई युवा सदस्यों की उनके इस अपराध के लिए हत्या कर दी गयी है कि उन्होंने चुनावों के जनप्रिय आदेश का समर्थन किया था. अन्य पार्टियों व जन संगठनों के कई सदस्यों की भी यही हालत हुयी है. इन लगातार कोशिशों के असमी भाषी व अल्पसंख्यक हिस्सों में परिणाम नजर आ रहे थे. ये चुनाव यह दिखाते कि एकता की ताकतों ने बहुत गहरे काम कर लिए थे और इस दावे को बेनकाब करते कि आन्दोलनकारियों का असमी भाषी जनता पर सम्पूर्ण नियन्त्रण है. यह विकास आन्दोलनकारियों, अमरीकी एजेंसियों, विपक्षी बुर्जुवा पार्टियों या कांग्रेस(आई) को पसन्द नहीं था. राष्ट्रीय एकता की आवाज, वामपंथ की आवाज की फिलहाल सांस रोकने में आतंक ने उन सब की मदद की.

साथियों, हम सबको असम के अपने साथियों की देशभक्ति, साहस व ईमानदारी के लिए अवश्य प्रशंसा करनी चाहिए जो मजदूर वर्ग की भावना के प्रति सच्चे रह कर देश की एकता की, मेहनतकशों की एकता की, वर्ग एकता की रक्षा करते हैं. अपने जीवन व अंगों की बाजी लगाकर उन्होंने भारत की एकता का झण्डा बुलन्द किया, अमरीकी साजिशों को बेनकाब किया और असम में जनवादी ताकतों की विजय की नींव रखी.

पंजाब का जटिल षड़यन्त्र

मैंने असम के सवाल पर विस्तार से चर्चा की है क्योंकि यह एक वह संदिग्ध राजनीतिक घटना है जिस पर मजदूर वर्ग को ध्यान देना चाहिए. उतनी ही संदिग्ध किस्म की स्थिति पंजाब में भी है और हम देखते हैं कि वहां पर भी कांग्रेस(आई) सरकार है जो समस्या का अस्थाई हल ढूंढ रही है तथा स्थिति को और बिगड़ने दे रही है. यहां पर भी उग्रपंथी धड़ा भारत के

के राज्यों में जातियों को वापसी विद्वेषी बनाने की अमरीकी समझ को आगे बढ़ाते हुए एक पृथक सिख राज्य का पाठ खुलेआम पढ़ाते हैं. लेकिन आन्दोलन के नेता अपनी मांगों को राज्य को और अधिक शक्तियों के लिए मांगों के रूप में पेश कर रहे हैं और लगता है सरकार भी उन पर विचार करने के लिए सहमत है. लेकिन यह अपने कदम पीछे हटा रही है तथा अपना ध्यान छोटे सवालों की ओर मोड़ रही है. कुछ जायज मुद्दों को सांप्रदायिक अपील के साथ जोड़ा जा रहा है. सांप्रदायिक अपील को नियंत्रित करने तथा जायज मुद्दों का समाधान करने की बजाए सरकार सांप्रदायिक अपील को रियायतें दे रही है और जायज मांगों से पीछे हट रही है. चण्डीगढ़ व भाषा के निर्णायक आधार पर कुछ क्षेत्रों को देने जैसे मुद्दों का समाधान करने की बजाए सरकार ने आकाश-वाणी से सिखवाणी के प्रसारण जैसी सांप्रदायिक मांगों को रियायतें दी हैं. बाकी मांगों पर सरकार एक राज्य को दूसरे के खिलाफ खड़ा कर रही है और इस तरह यह पहलकदमी उग्रपंथी सिख प्रतिक्रियावादियों को सौंप रही है.

त्रिपुरा द्वारा मार्गदर्शन

इस सबके विपरीत इस पर गौर कीजिए कि सी पी आई (एम) के नेतृत्व में त्रिपुरा की वाम मोर्चा सरकार ने किस तरह से जनता की एकता को बनाए रखा है. त्रिपुरा की वामपंथी पार्टियों व सरकार को विशेष बधाई दी जानी चाहिए क्योंकि उन्होंने फूटपरस्त ताकतों की त्रिपुरा की जनता को बंगालियों व जनजातियों में विभाजित करने की चाल को धराशायी कर दिया है. उनकी विजय इसलिए और भी ज्यादा महत्वपूर्ण है क्योंकि कांग्रेस (आई) ने जनजाति पृथकतावादियों तथा आमरा बंगाली व आनंद मार्गी जैसे प्रतिक्रियावादी संगठनों के साथ गठबंधन किया था.

अन्य फूटपरस्त ताकतें

इन पृथकतावादी ताकतों के अलावा हमारा देश अन्य फूटपरस्त ताकतों से, जो अतीत से विरासत में मिली हैं, पीड़ित है. हिंदू सांप्रदायिकतावाद — सांप्रदायिकतावाद की एक अनियंत्रित अपील जो किसी जायज मांग पर आधारित नही है, अल्पसंख्यक पृथकतावाद की अपील जो इसलिए सफल होती है क्योंकि मुसलमान अल्पसंख्यकों के खिलाफ भेदभाव की नीति अपनायी जाती है, जातिवादी दमन, और हरिजनों पर अत्याचार जो बहुत ही पिछड़े हिस्सों को रोजगार में आरक्षण देकर मेहनतकशों को विभाजित करने के लिए शासक पार्टी के लिए एक सुनहरी अवसर है—मेहनतकशों को विभाजित

करने के लिए, वर्ग एकता और इसके साथ राष्ट्रीय एकता की समझ को विघटित करने के लिए हर हथियार इस्तेमाल किया जाता है.

ट्रेड यूनियनों के कार्य

यह नहीं कहा जा सकता कि हमारी ट्रेड यूनियनें इस खतरे से अवगत हैं, इस तथ्य से अवगत हैं कि इस जनता का बड़ा हिस्सा पहले ही ट्रेड यूनियन संगठनों के प्रति उदासीन है. जब तक ट्रेड यूनियनें इस असलियत को नहीं पहचानती हैं, इसे मध्येनजर नहीं रखती हैं कि मजदूर वर्ग के बड़े हिस्सों की आर्थिक हालत की रक्षा की कामन समस्या से संबंधित समस्याओं के अलावा भी महत्वपूर्ण समस्याएं हैं, उनकी अपील सर्वव्यापी नहीं होगी. उन्हें संकीर्णतावादी व विभागीय संगठनों के लिए रास्ता छोड़ना पड़ेगा. भारत में मजदूर की दशा जाति व धर्म के आधार पर सामंती सामाजिक भेदभाव से मुक्त नहीं है—अपनी गतिविधियां चलाते वक्त हमारी ट्रेड यूनियनों को इस तथ्य को घर कर लेना होगा. साथ ही वर्ग संघर्ष का तर्क उन सभी हिस्सों को पुराने विभाजनों से ऊपर उठने व कंधे से कंधा मिलाकर खड़ा होने के लायक बनाता है जो भुखमरी व कष्टों का सामना कर रहे हैं. मैं बंबई के कपड़ा मजदूरों की गौरवमयी उदाहरण का उल्लेख कर रहा हूं जिन्होंने एक साल से भी ज्यादा समय से अपनी एकजुटता कायम कर रखी है—विभिन्न जातियों व विभाजनों का जन समुदाय लेकिन वर्ग के रूप में कार्य कर रहा है यदि ट्रेड यूनियनों से जरूरी मार्गदर्शन व व्यवहार प्राप्त होता है तो भारत के सभी हिस्सों में मजदूर यह सब कर लेने की क्षमता रखते हैं.

अधिनायकवादी शासन के खिलाफ संघर्ष

साथियो, बहुत ही जटिल परिस्थितियों के दौरान कांग्रेस (आई) के अधिनायकवादी शासन के खिलाफ संघर्ष जारी रखना है. हम सबको उन सब जनवादी ताकतों को बधाई देनी चाहिए जिनके एकजुट प्रतिरोध ने अब तक बदनाम बिहार प्रेस विधेयक के लागू होने को रोक रखा है. समाचार पत्रों, संसद में व उसके बाहर आंदोलन के समर्थन के साथ सभी विपक्षी पार्टियों के एकजुट प्रतिरोध ने अपने दबाव को महसूस कराया. बिहार के मुख्य मंत्री को यह घोषणा करने के लिए मजबूर किया गया कि विधेयक मर चुका है. हमारी सीटू यूनियनों ने खास तौर से बिहार में इस आंदोलन में इसे सफल बनाने के लिए हिस्सा लिया. इसी तरह का एक बदनाम कानून तमिलनाडु

में ए आई डी एम के सरकार द्वारा लागू किया गया है और बहुत समय हो गया है इसकी वापसी के लिए आंदोलन शुरू किया जाना चाहिए.

जनता के खिलाफ अधिनायकवादी ताकतों का चक्र चल रहा है. केन्द्र में ज्यादा से ज्यादा शक्ति केन्द्रित की जा रही है जिससे केन्द्र व राज्यों के बीच सम्बन्धों में संकट पैदा हो रहा है. मजदूर वर्ग-विरोधी कानून पारित किया जा रहा है और कई श्रम-विरोधी कानून आने वाले हैं. इन सबके अलावा पुलिस बर्बरता, महिलाओं के साथ बलात्कार, पुलिस हिरासत में हत्या के खिलाफ कोई अपील नहीं है. पुलिस के हर कुकर्म को रफा-दफा कर दिया जाता है. तथाकथित कानून का शासन शायद ही अस्तित्व में है. अदालतों को 'पिट्ठू' जजों से भरा जा रहा है. मन्त्रिमण्डल में सुप्रीम नेता अपने हाथों में समूची शक्ति थामे हुए है. मन्त्रिमण्डल की सामूहिक जिम्मेदारी बहुत पहले ही खत्म हो चुकी है. संसद के नाम पर तानाशाही कदम उठाये जा रहे हैं. वर्षों से संगठनात्मक चुनाव नहीं कराए गए हैं. संगठन में विघटन, जनता से इसका अलगाव, आर्थिक संकट, वर्ग शासन के लिए जरूरी मनमाने कदमों पर विश्वसनीयता बढ़ाते हैं. यह खतरनाक प्रक्रिया है. ट्रेड यूनियनों को संघर्ष करना होगा और इस कार्य के लिए इसे अधिनायकवादी शासन के ज्वार को रोकने में दिलचस्पी रखने वाली सभी जनवादी व विपक्षी ताकतों के साथ हाथ मिलाना होगा.

वाममोर्चा सरकारों को समर्थन

साथियो, इस संघर्ष में पश्चिम बंगाल व त्रिपुरा की वाममोर्चा सरकारें जनवाद की विकसित स्तम्भ हैं. पांच सालों तक उन्होंने आम आदमी के लिए काम किया और जनता में वामपंथी ताकतों के आधार को विस्तृत किया. हाल ही के चुनावों में उन्होंने राज्य में मंदी की स्थिति के, विद्युत ब्रेकडाउन व सूखे की हालत के तथा त्रिपुरा में उपद्रवों के बावजूद अपनी मतदाता शक्ति में वृद्धि की है. जनता के साथ उनकी कामयाबी का, उन द्वारा प्राप्त किए गए विश्वास का यही एक वास्तविक माप है. यह इसलिए है क्योंकि इन सरकारों ने आम जनता व मजदूरों के पक्ष में अपना पूरा जोर लगाया और पूंजीपतियों को सरकारी मशीनरी की सेवाएं देने से इंकार किया. क्योंकि आर्थिक लीवर तो केन्द्रीय सरकार के हाथों में है इसलिए पश्चिम बंगाल की जनता व मजदूर वर्ग मन्दी के परिणामों से बच नहीं सकी. फिर भी पश्चिम बंगाल सरकार मजदूरों के साथ खड़ी रही और मजदूरों के हितों की रक्षा करने के लिए हर कार्य किया. इसने मजदूरों को

हड़ताल की स्वतंत्रता की गारंटी दी और धन्नासेठों की कई साजिशों को धराशायी करने में उनकी मदद की.

संसद का शक्तिहरण

संसदीय जनवाद में जनता के चुने हुए प्रतिनिधियों की संसद की शक्ति के माध्यम से जनता सरकार को नियन्त्रित करती है. लेकिन भारत में संसद को इस शक्ति से वंचित कर दिया गया है और इसे हास्यास्पद स्थिति में पहुंचा दिया गया है. बजट से ठीक पहले सरकार ने करीब 1,300 करोड़ रुपये के अतिरिक्त प्रसाधन जुटाए. सहायक कस्टम ड्यूटी में पांच प्रतिशत वृद्धि से 200 करोड़ रुपये प्राप्त होंगे. सिगरेटों को उपलब्ध एक्साइज ड्यूटी में रियायत को तथा स्टेनलैस स्क्रेप को उपलब्ध आयात-कर में रियायत को बापस लेकर सरकार 200 करोड़ रुपये और इकट्ठा करने की उम्मीद करती है. पेट्रोलियम की कीमतों में वृद्धि करके सरकार ने 800 करोड़ रुपये इकट्ठा करने का प्रावधान कर लिया है. इससे भी सन्तुष्ट न होकर, बजट की ठीक पूर्व संध्या को सरकार ने गरीबों की रक्षा की अपनी नीति के चलते डाक-तार दरें बढ़ाकर 70 करोड़ रुपये जुटाए. बजट से बाहर तेरह सौ करोड़ रूपये जुटाए गए, नियमित बजट में औपचारिकता के लिए बस 716 करोड़ रूपये जुटाने का प्रावधान किया गया है. संसद से सलाह किए बिना डाक दरों की वृद्धि किए जाने को उचित ठहराते हुए संचार मंत्री ने बेशर्मी के साथ 1893 के ब्रिटिश कानून का उल्लेख किया. लेकिन यह सब अचानक नहीं है. संसद का, विपक्ष का यह अवमूल्यन सरकार की राष्ट्रपति प्रणाली के लिए कांग्रेस (आई) व इसके नेता की अथक कोशिशों का ही हिस्सा है. जनता के अधिकारों पर या आर्थिक नीतियों पर असर डालने वाले अध्यादेशों को विधान सभाओं या संसद के अधिवेशन की पूर्व संध्या को जारी करना इंदिरा निजाम के तहत व्यवहार रूप में विकसित हो रहा है. आंतरिक मंत्रि मंडल अर्थात् स्वयं इंदिरा गांधी के हाथों में समूची शक्तियों का केंद्रीकरण संविधान के हर दूसरे तंत्र को लाचारी भूमिका में बदल रहा है.

जनविरोधी बजट

हमारे देश में मजदूर समुदाय बजट में जो उनकी आर्थिक परिस्थितियों व कल्याण पर असर डालता है शायद ही कोई रूचि रखता है. इसलिए वे इसके हमलों का पूर्वाभास करने और उन्हें शिकस्त देने में नाकामयाब

रहते हैं इस साल के बजट ने मुद्रास्फीति में वृद्धि, कीमतों में वृद्धि, आय तथा रोजगार में कमी की संभावनाओं की ही पेशकश की है. इस साल कराधान में भारी वृद्धि हुई है. रेल किरायों व माल भाड़ों में वृद्धि सहित ये 2,500 करोड़ रूपये के हैं. एक या दूसरे तरीके द्वारा इसका बोझ मजदूर वर्ग सहित आम जनता पर लाद दिया जाएगा. दैनिक यात्रियों के रेलवे किरायों की वृद्धि प्रतिदिन अपनी नौकरी पर जाने के लिए यात्रा करने वाले लाखों मजदूरों व कर्मचारियों के लिए कुचलने वाला बोझ साबित होगी.

लेकिन यही सब कुछ नहीं है. पिछले साल के करीब दो हजार रूपये घाटे की पृष्ठभूमि में इस साल के बजट में भी 1,555 करोड़ रूपये का घाटा छोड़ा गया है बीत गए पिछले सालों में मुद्रा सप्लाई में करीब 15 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि कृषि उत्पादन कम हुआ है और प्रति केपिटा आय में ऋणात्मक वृद्धि हो सकती है. स्वयं इससे ही कीमतों पर दबाव बढ़ेगा. और इस साल की घाटे की वित्तव्यवस्था से कीमतों में वृद्धि अवश्य होगी तथा मजदूर व कर्मचारी अपनी वेतनों में कमी के खिलाफ संघर्ष करने के लिए मजबूर होंगे.

बेरोजगारी से लड़ने तथा इसे कम करने के लिए बजट में कोई प्रावधान नहीं है. ऐसा लगता है कि वित्त मंत्री व इंदिरा सरकार यह नहीं जानते कि भारत में लाखों व्यक्ति बेरोजगार हैं और उनकी संख्या दिन पर दिन बढ़ रही है.

बजट आश्रयहीन आर्थिक स्थिति, कीमतों पर दबाव, ज्यादा बेरोजगारी तथा मजदूरों के वेतन में कमी व उनके आर्थिक हालात में बिगड़ाव की संभावनाओं का अनावरण करता है यदि ट्रेड यूनियन आंदोलन एकजुट होकर सरकार पर अपनी नीतियां मानने के प्रति दबाव देने के लिए कार्य करता तो कम से कम कुछ हद तक बजट को प्रभावित किया जा सकता था.

इसे नोट करो कि जहां जनता के लगभग सभी हिस्सों पर हमला किया जा रहा है वहां वित्त मंत्री समृद्ध जमींदार लाबी को—पूंजीवादी किसानों व अमीर जमींदार स्वर्थों को—रियायतें देना नहीं भूलते.

सरकार ने अब कृषि भूमि को पूरी तरह कर मुक्त कर दिया है. श्री मुखर्जी कहते हैं कि "हमारा अनुभव है कि कृषि भूमि के मूल्यांकन से प्रशासनिक कठिनाइयां व मुकदमेबाजी होती है. पिछले कुछ वर्षों में लेवी से प्राप्ति भी कोई खास नहीं हुई है और फिर बागान सहित कृषि भूमि के उपर से संपत्ति कर खत्म कर देने के बाद कृषि भूमि के ऊपर भूसंपत्ति कर की लेवी जारी रखने का कोई खास व्यवहारिक औचित्य नहीं है."

इसका कोई कारण नहीं है कि ऐसी लेवी से छोटे धारकों को छूट देने के बाद समृद्ध हिस्सों, बड़े जमींदारों, पर क्यों न भूसम्पत्ति-कर जारी रखा जाए जिनको शायद ही कोई आय-कर अदा करना पड़ता है. वे इतने प्रभावशाली हैं कि उन्होंने उनसे लेवी प्राप्त करना असम्भव बना दिया था. और अब सरकार लेवी हटाने के लिए इसी का बहाना बनाती है. यह सरकार जो किसी भी प्राप्ति योग्य लेवी के लिए गरीब से गरीब हिस्से की जेब तलाशती है जमींदारों को कराधान से जबरदस्ती मुक्ति पाने की इजाजत देती है.

बेरोजगारी

साथियो, बेरोजगारों के लिए फौरी राहत जुटाने के लिए तथा सरकार को ऐसी नीतियां अपनाने के लिए मजबूर करने के लिए जो बेरोजगारी की वृद्धि को कारगरता के साथ नियंत्रित करेंगी, समूचे ट्रेड यूनियन आन्दोलन को सक्रियता के साथ काम करना पड़ेगा. सरकार बेरोजगारी को खत्म करने की योजनाओं के झूठे दावे करती रही है. यह अपनी ग्रामीण रोजगार योजनाओं तथा अन्य परियोजनाओं को विज्ञापित करती है. और जहां तक शहरी क्षेत्रों का सम्बन्ध है यह किसी भी योजना को विज्ञापित नहीं करती है. छठी पंचवर्षीय योजना यह दावा करती है कि यह श्रम में सभी नयी भर्तियों की रोजगार-मांगों को पूरा करेगी—गरीबी मिटाने के दावे के समान ही यह भी कांग्रेस(आई) का एक और दावा है—लेकिन तथ्य इसके विपरीत को ही साबित करते हैं. आर्थिक सर्वे (1982-83) बताता है कि रोजगार केन्द्रों के जीवंत रजिस्टरों में रोजगार मांगने वालों की संख्या अगस्त 1981 के अन्त में 1 करोड़ 72 लाख से बढ़कर अगस्त 1982 के अन्त में 1 करोड़ 90 लाख हो गई. जनवरी-सितम्बर 1982 में उसके पिछले साल इसी दौरान दिए गए 41.8 हजार रोजगार की तुलना में केवल 38.7 हजार रोजगार ही दिये गए. रोजगार में धीमी वृद्धि पिछले कुछ सालों के आंकड़ों से जानी जा सकती है. एमर्जेन्सी शासन के वर्ष 1975 में सार्वजनिक क्षेत्र में 128.83 लाख नौकरियां थी और निजी क्षेत्र में 68.08 लाख, यानी कुल मिलाकर 197 लाख. संगठित क्षेत्र में 1981 में कुल नौकरियां 229 लाख थी जिसमें से 184.84 लाख सार्वजनिक क्षेत्र में तथा निजी क्षेत्र में 73.95 लाख थी. यह वृद्धिदर केवल 2.3 प्रतिशत प्रति वर्ष रही. इसकी तुलना करो पंजीकृत बेरोजगारी में एक साल में (अगस्त 1981 से अगस्त 1982) 14 प्रतिशत वृद्धि से—1 करोड़ 72 लाख से सीधे 1 करोड़ 90 लाख.

छटी पंचवर्षीय योजना ऊंचे-ऊंचे दावे करती है और सभी नयी भर्तियों को नौकरी देने का वादा करती है. यह दावा करती है कि इसकी योजना पांच सालों में 3 करोड़ 40 लाख नयी नौकरियां देगी जो श्रमशक्ति में वृद्धि, जिसकी परिभाषा है इस दौरान 15 साल व इससे ज्यादा उम्र के व्यक्ति, को रोजगार देने के लिए पर्याप्त होंगी. यदि इस तथ्य को प्राप्त भी कर लिया गया तो इसके बाद भी 2 करोड़ 10 लाख व्यक्ति (जो कम करके लगाया गया अनुमान है) बेरोजगार रह जाएंगे.

बेरोजगारी के आंकड़ों में लगातार व तेज वृद्धि यह दर्शाती है कि योजना बनाने वाले व सरकार स्थिति का मुकाबला करने में पूरी तरह नाकामयाब रहे हैं. अर्थात् ऊंचे-ऊंचे दावों के तथा सार्वजनिक धन के फिजूल खर्च के बावजूद उनके पास किसी भी तरह की कोई भी योजना नहीं है.

इन रोजगार ढूंढ़ने वालों को नौकरियां कहां मिलेंगी. संगठित उद्योग में नहीं, आधुनिक उद्योग में नहीं, बल्कि उन भीड़ भड़क्के वाले व्यवसायों में मिलेंगी जहां से लोग हजारों की तादाद में भाग रहे हैं. "प्रमुख रोजगार जनित्र गतिविधियां कृषि, ग्रामीण विकास, ग्राम व लघु उद्योगों, निर्माण व सार्वजनिक प्रशासन तथा अन्य सेवाओं में होंगी," (पृष्ठ 154) अर्थात् ज्यादातर उन उद्योगों में जिनमें कम वेतन मिलता है तथा कमर तोड़ मेहनत करनी होती है. ये उद्योग इतने बिखरे हुए हैं कि किसी को भी पता नहीं चलेगा कि किस स्थान पर कहां तक कोई वृद्धि हुई हैं.

योजना बनाने वाले एक बार फिर कहते हैं कि कृषि में और भी भीड़-भाड़ होनी चाहिए. "विकास की मौजूदा दर पर संगठित क्षेत्र छटी पंचवर्षीय योजना के दौरान केवल 40 से 50 लाख नौकरियां ही दे सकता है. इसके बाद भी कृषि, लघु क्षेत्र व अन्य असंगठित उद्योगों में भारी संख्या में रिक्तियां रह जाएंगी"

लेकिन एक और दस्तावेज सच्चाई बयान करता है और कहता है कि कृषि व अन्य क्षेत्रों में नौकरियों पर निर्भरता का मतलब है सुरक्षा की कमी व स्तर से-कम-का रोजगार". स्वरोजगार पर जोर पर निर्भरता के साथ-साथ श्रमशक्ति का एक बहुत बड़ा हिस्सा असंगठित क्षेत्र में है, क्योंकि संगठित क्षेत्र की रोजगार देने की क्षमता बहुत ही कम है. असलियत में हाल ही के वर्षों का अनुभव यह है कि श्रम शक्ति में वृद्धि का केवल करीब 12 प्रतिशत हिस्सा ही संगठित क्षेत्र में रोजगार पाता है. श्रम शक्ति के बाकी सदस्यों को रोजगार ढूंढ़ना पड़ेगा कृषि में व अन्य क्षेत्रों में तथा गैर-कृषि गतिविधियों में जिसका चित्रण भारी पैमाने पर कम-स्तर के रोजगार में

और स्वरोजगार में होता है (मौजूदा हालात में स्वरोजगार प्रायः स्वरोजगार व स्वभुखमरी है).

इसलिए 1 करोड़ 90 लाख व्यक्तियों को, जिन्होंने मूर्खता के साथ स्वयं को रोजगार केंद्रों में दर्ज करा लिया है, वापस गांव चले जाना चाहिए व रोजगार ढूंढ़ना चाहिए. शिक्षित बेरोजगारों को भी ऐसा ही करने के लिए कहा गया है. खासतौर से उन्हें कहा गया है कि सभी रोजगारों को छोड़ कर स्वरोजगार वाले हो जाएं. शिक्षित बेरोजगारों की, मैट्रिक पास, ग्रेजुएट या उससे ज्यादा शिक्षा के, संख्या का अनुमान 1980 के शुरू में 38 लाख 70 हजार था. इस क्षेत्र से नौकरियों की कुल मांग की पूर्ति के लिए छटी योजना में 60 लाख नई नौकरियां चाहिएं. लेकिन उन्हें कौन ये नौकरियां देगा ? योजना आयोग कहता है कि वे अपनी नौकरियों का खुद इंतजाम करें. स्व-निर्भरता व स्वरोजगार ! "साल दर साल वृद्धि (असंगठित क्षेत्र में रोजगार में) करीब 8 लाख होती है. यदि यह मान भी लिया जाए कि संगठित क्षेत्र में भावी वृद्धि पूरी तरह से केवल शिक्षित व्यक्तियों द्वारा भर दी जाए तो भी हम देखते हैं कि शिक्षित व्यक्तियों के लिए तब तक पर्याप्त नौकरियां नहीं होंगी जब तक उन्हें या तो स्वरोजगार की तरफ नहीं मोड़ा जाता या फिर संगठित उद्योग की रोजगार क्षमता में पर्याप्त वृद्धि नहीं की जाती. दूसरा विकल्प हमको संभव नहीं लगता जिससे हमारे पास स्वरोजगार ही रोजगार का एक प्रमुख तरीका रह जाता है." इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि इस तरह की योजना से बेरोजगारी हर साल बढ़ेगी ही.

पंजीकृत बेरोजगारी में 1 करोड़ 90 लाख तक वृद्धि हो जाना यह बताता है कि समस्या का चरित्र कितना जटिल है और ट्रेड यूनियन आंदोलन को बेरोजगारों को संगठित करने के लिए अपनी पूरी शक्ति जुटानी पड़ेगी और सरकार से फौरी राहत हासिल करने तथा काम देने की योजना पानी पड़ेगी.

ग्रामीण रोजगार

इस सम्बन्ध में ग्रामीण रोजगार के अपने कार्यक्रम के बारे में सरकार द्वारा किए गए बड़े-बड़े दावों को बेनकाब करना जरूरी है. बीस-सूत्री कार्यक्रम के तहत राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारों के लिए रोजगार देने के लिए बनाया गया है. प्रतिवर्ष 30 करोड़ से 40 करोड़ कार्य दिवस देने का लक्ष्य है. यह दावा किया गया है कि 1981-82 में 26 करोड़ 71 लाख कार्य-दिवस का रोजगार दिया गया था और 1982 के लिए 33 करोड़ 10 लाख का लक्ष्य है. यह नोट किया जाना चाहिए कि सरकार ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी की मात्रा को कम करके आंकती है. अनुमानों के आधार पर यह संख्या 4.5 करोड़ है.

यदि 20-सूत्री कार्यक्रम के समर्थक इस लक्ष्य तक पहुंचने में सफल भी हो जाते हैं तो किस हद यह बेरोजगारी की भारी संख्या पर असर डालेगी. इसका अर्थ है कि ज्यादा से ज्यादा 15 लाख व्यक्तियों के लिए पूरे साल रोजगार अर्थात् ज्यादा से ज्यादा 3 प्रतिशत बेरोजगारों के लिए रोजगार.

यह सभी जानते हैं कि बुर्जुवा जमींदार शासन के तहत ये योजनाएं अपने पूरे लाभ जनता तक नहीं पहुंचा सकतीं. खर्च का बड़ा हिस्सा भ्रष्टाचार हड़प कर लेता है और लाभ की उम्मीद करने वालों की बड़ी संख्या देखती की देखती रह जाती है.

महाराष्ट्र सरकार की ग्रामीण रोजगार वृद्धि योजना की विश्व बैंक ने काफी प्रशंसा की थी और इसने अधिकारियों की ओर से बढ़ा-चढ़ा कर किए गए दावों को स्वीकार किया था. इसने कहा कि "1973 से 1978 तक के पांच वर्षों में महाराष्ट्र ग्रामीण बेरोजगारी में 21 प्रतिशत कमी आई, आदि." लेकिन हाल में की गयी बेनकाबियों से पता चलता है कि भ्रष्टाचार इतना व्याप्त था कि ऐसे दावों को स्वीकारना कठिन है. यह काफी हद तक सम्भव है कि राहत, कार्य-दिवसों, आदि के बारे में आंकड़े गलत हों और भ्रष्ट अफसरान ने अपने आप गढ़ लिए हों. यह तब सामने आया जब (महाराष्ट्र के जिलों में से एक) धुलिया जिले के कलेक्टर, एक ईमानदार व साहसी अफसर, ने एक नमूने का सर्वे किया और अनुमान लगाया कि अकेले इस जिले में भ्रष्टाचार 87 लाख रुपये तक का है. कांग्रेस(आई) के कार्यकर्त्ता व मन्त्री उस अफसर के पीछे लग गए और उसका दूसरे जिले में तबादला करा दिया. लेकिन यह घोटाला इतना बड़ा था कि राज्य सरकार को एक कमेटी बैठानी पड़ी. कांग्रेस(आई) के बहुमत से बनी इस कमेटी ने वास्तविक हालात को दबाने तथा भ्रष्टाचार को कम करके आंकने की कोशिश की. कलेक्टर के मुताबिक 5.5 करोड़ के कुछ खर्च में 87 लाख रुपये तक का भ्रष्टाचार था.

कांग्रेस(आई) के प्रभुत्व वाली इस कमेटी को यह स्वीकार करना पड़ा कि वेतनों में रु. 10.90 लाख तक की हेराफेरी थी. यह पता चला कि धुलिया जिला के पुलिस सुपरिन्टेन्डेंट ने अपने कार्यक्षेत्र के पुलिस स्टेशनों को यह आदेश दे रखा था कि उसकी इजाजत के बिना रोजगार गारंटी योजना में भ्रष्टाचार के मामलों की रिपोर्ट दर्ज नहीं की जाए. यह भी नोट किया गया कि कलेक्टर द्वारा बताये गए भ्रष्ट अफसरान के तबादले भी जानबूझकर धीमी प्रक्रिया से किये गए. ऐसे हालात में किसी रोजगार योजना का क्या अवसर है ?

ग्रामीण व शहरी बेरोजगारों को रोजगार देने के बारे में सरकार की नीति बस एक आंख-दिखावा ही है. आने वाले दिनों में इस दिवालिया नीति के कारण और फिर मंदी के हालात के कारण बेरोजगारों की संख्या में वृद्धि होगी.

आवास

साथियो, बेरोजगारी के साथ-साथ मजदूर व कर्मचारी नगर के स्लम-इलाकों में आवास पाने की समस्या का सामना कर रहे हैं क्योंकि उनकी एक भारी संख्या के लिए स्लम-इलाकों से बाहर अच्छे कमरे, फ्लैट, आदि प्रतिबन्धित हैं. छटी योजना का दस्तावेज कहता है कि "कुल शहरी आबादी का अनुमानत: एक-पांचवां हिस्सा स्लम-इलाकों की आबादी है. ऐसी आबादी की 1985 में मात्रा का अनुमान करीब 3 करोड़ 31 लाख है." यह हुई कुछ प्रगति. इन गंदी बस्तियों—स्लम इलाकों में जाओ व स्वरोजगार हो जाइए—योजना बनाने वालों का यही आह्वान है.

इन 3 करोड़ 30 लाख व्यक्तियों के लिए क्या आवास कार्यक्रम है ? सरकार ने उनके लिए 29 लाख घरों का वायदा किया है, बाकी को निजी धोखेबाजों पर छोड़ दिया गया है. योजना बनाने वाले जानते हैं कि गरीबों को मकान देने के लिए निजी स्रोत कुछ नहीं करेंगे. जब जमीन के दाम लगातार बढ़ रहे हों तो उन्हें क्या लाभ मिलेगा ? इसलिए स्लम-इलाकों में जाइए. यह स्थिति आम आदमी को गुंडों व सट्टेबाजों की दया पर किस प्रकार ला देती है 12 मार्च 1983 के टाइम्स आफ इंडिया की निम्न खबर से देखी जा सकती है. "बंबई में स्लम-इलाकों के दादा बड़ा व्यापार कर रहे हैं. पिछले तीन सालों में उन्होंने अनधिकृत कालोनियों में मकान बेचकर करीब 36 करोड़ रूपये बना लिए हैं. तीन वर्ग मीटर के कमरे के वे करीब 20 हजार रूपये लेते हैं."

शहरों, नगरों, खदानों व बागान क्षेत्रों में मजदूरों तथा कर्मचारियों के लिए आवास का सवाल एक प्रमुख सवाल बन गया है. आवास की परिस्थितियों में बिगड़ाव, स्लम-इलाकों में जबरन रिहायश, मालिकान द्वारा दिए गए मकानों की खस्ता हालत ये सब मौजूदा आवास परिस्थितियों पर हमले हैं तथा इनसे जीवन स्तर गिर रहा है. नगरों व शहरों में सरकारी कर्मचारी व अन्य मजदूर रिहायशी मकानों की कमी के कारण मकान किराया भत्तों में वृद्धि की मांग कर रहे हैं. बागान इलाकों में सरकारी सहायता के बावजूद बागान मालिकान मजदूरों को मकान देने से इंकार कर रहे हैं. वे मजदूरों के साथ उसी तरह से व्यवहार कर रहे हैं जिस तरह से ब्रिटिश बागान मालिक किया करते थे.

मजदूरों को स्लम-इलाकों में भेजने व धोखेबाजों के हाथ सौंपने की इस साजिश के ऊपर ट्रेड यूनियन आंदोलन को लगातार चोट करनी चाहिए.

उत्पादकता वर्ष-तालाबंदियां

साथियो, प्रधान मंत्री ने पिछले साल को उत्पादकता वर्ष के रूप में घोषित किया था और देश के लिए इसके विनाशकारी परिणाम हुए हैं. क्या प्रधान मंत्री इस बात से बेखबर थीं कि देश मजदूरों के खिलाफ तेज हमलों के काल के दौरान से गुजर रहा था और मालिकान उत्पादन कम करने के लिए मजदूरों को घुटने टेकने के लिए मजबूर करने के लिए बेईमानी के साथ तालाबंदी रूपी हथियार इस्तेमाल कर रहे थे ?

पिछले दो साल मजदरों के लिए नींद हराम के साबित हुए जिनको अपनी जीविका व नौकरियों के लिए लंबी लड़ाइयां लड़नी पड़ीं. औद्योगिक विवादों में 1981 में कार्य दिवसों की हानि की संख्या 2 करोड़ 50 लाख से भी बढ़ गई और यह 1980 की इसकी सख्या से 40 लाख ज्यादा थी हालांकि यह 1979 की 3 करोड़ 50 लाख की संख्या से कम थी. अधिकृत आंकड़े यह स्वीकार करते हैं कि इन संघर्षों का नेतृत्व करने में सीटू सबसे आगे थी और इसने किसी भी अन्य संगठन से ज्यादा कार्यवाहियों का नेतृत्व किया.

1982 की संख्या ने 6 करोड़ 20 लाख कार्यदिवसों की हानि दर्ज करके सभी पिछले मानकों को तोड़ दिया. बंबई की कपड़ा हड़ताल को छोड़कर यह संख्या 4 करोड़ 33 लाख 80 हजार कार्य दिवस थी.

स्वयं इससे मजदूरों की पीड़ा व कष्टों का पता नहीं चलता है. हाल ही के वर्षों में सरकार की मदद से मालिकान ज्यादा से ज्यादा तालाबंदियां कर रहे हैं. मजदूरों को घुटने टेकने के लिए भूखों मारने की सुव्यवस्थित कोशिश जारी है.

निम्नलिखित आंकड़े कहानी बयान करते है.

कार्य-दिवसों की हानि

(हजारों में)

वर्ष	हड़ताल के कारण	तालाबंदियों के कारण
1978	15,423	12,917
1979	35,804	8,050
1980	12,018	9,907
1981	15,658	10,806

1979 को छोड़कर कुल कार्य-दिवसों की हानि का 40 प्रतिशत घोषित तालाबंदियों के कारण है. इन्दिरा गांधी का उत्पादकता वर्ष मजदूरों के लिए तालाबंदी वर्ष साबित हुआ. लेकिन सरकार व उसके प्रवक्ता अपने स्वामियों की तालाबंदी करतूतों को संरक्षण देते हुए केवल हड़तालों की बात करने में कभी नहीं रुकते.

तालाबंदी रूपी हमलों का मुकाबला करने के लिए ट्रड यूनियन आन्दोलन को नए तरीके बनाने होंगे. पश्चिम बंगाल में 17 जूट मिल बंद हैं व अनुमान है कि 65 हजार बदली मजदूर भी नौकरी से निकाल दिए गए हैं.

प्रबंधन में मजदूरों की भागीदारी

साथियो, आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि इन्दिरा गांधी के उत्पादकता वर्ष ने प्रबंधन में मजदूरों की भागीदारी की मृत्यु की भी घोषणा की है. पहले बीस-सूत्री कार्यक्रम में मजदूरों की भागीदारी शामिल की गयी थी. उत्पादकता वर्ष की सफलता की गारंटी के लिए दूसरे बीस-सूत्री कार्यक्रम से इसे चुपचाप निकाल दिया गया है. आपको याद होगा कि पहला बीस-सूत्री कार्यक्रम एमर्जेंसी से ध्यान परे हटाने के लिए बनाया गया था और इसमें मज़दूरों की रुचि का केवल एक ही प्वाइंट था मजदूरों की भागीदारी का यह प्रस्ताव. यह बात बिलकुल सत्य है कि सरकार का भागीदारी की किसी योजना को लागू करने का कोई इरादा नहीं है. सरकारी प्रतिष्ठान और सार्वजनिक व निजी क्षेत्र सभी इसका विरोध करने में एकजुट थे.

सीटू ने सार्वजनिक व निजी क्षेत्रों के कुप्रबंधन को, व्याप्त भारी भ्रष्टाचार, निम्नस्तर की वस्तुओं का इस्तेमाल करने और कुछ अफसरान का समाज-विरोधी तत्वों के साथ सम्पर्क को पूरी तरह महसूस करते हुए समानता के आधार पर प्रबंधन में भागीदारी का प्रस्ताव रखा. समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारी को निभाने के लिए मजदूर तैयार थे. लेकिन उनका सहयोग कौन चाहता था ? निजी स्वार्थ नहीं चाहते थे क्योंकि वे एक के बाद दूसरी फैक्ट्री में तालाबंदी कर रहे थे, सरकार नहीं चाहती थी क्योंकि यह एक के बाद दूसरी हड़ताल का निर्दयता के साथ दमन कर रही थी. और अब इस प्रस्ताव को ही वापस ले लिया गया है. असीमित पाखंड उसका नाम है इन्दिरा सरकार.

दमन

साथियो, हड़ताली मजदूरों के खिलाफ बर्बर दमन की हमें अवश्य निंन्दा करनी चाहिए. इन वर्षों में कांग्रेस(आई) शासित राज्यों में हमारी हड़तालों

को अनसुने दमन का सामना करना पड़ा. हड़तालों को गैर-कानूनी करार देना, मजदूरों की हत्या करते हुए पुलिस गोलीबारी, गुण्डा-गिरोहों की मदद से मजदूर वर्ग के खिलाफ आतंक और मजदूरों की पत्नियों के साथ बलात्कार—मजदूरों को निराश्रय करने के कांग्रेस(आई) सरकार के ये हथियार हैं. हमारे मजदूरों ने बहादुरी के साथ इस मध्यकालीन आतंक का सामना किया है और आमतौर पर सरकार व मालिकान को अपने कदम पीछे हटाने के लिए मजबूर किया है. संगठन के अधिकार की रक्षा करने के लिए उन्हें दमन के खिलाफ अथक लड़ाई लड़नी पड़ी और वे हजारों की तादाद में एकजुट हुए. भारतीय मजदूरों की इस महान लड़ाकू सेना के हमें योग्य नेता होने के लिए उठना चाहिए.

इस दौरान आतंक, तालाबंदियों व दमन के खिलाफ उनके गौरवमयी संघर्षों के लिए हमें कानपुर के सीटू नेताओं व मजदूरों का गर्मजोशी के साथ अभिनन्दन करना चाहिए. पागल अधिकरण मजदूरों पर नेताओं के रूप में अपने दुमछल्लों को थोपना तथा सीटू यूनियनों की मान्यता वापस लेना चाहते थे. कानपुर के जे.के. रेयान व जूट मजदूरों ने सीटू के नेतृत्व में महीनों तक बहादुराना लड़ाई लड़ी और कानपुर की पुरानी लड़ाकू भावना को पुनर्स्थापित किया. वे इसी एकता को प्रदर्शित करना जारी रखें और हमारे संगठन के लिए और भी नाम कमाएं. यह आश्चर्य की बात है कि मजदूरों के हितों में समर्पित कई अन्तर्राष्ट्रीय संगठन, लगता है, भारत में होने वाली घटनाओं से पूरी तरह अनभिज्ञ हैं. आपके सामने विदेशों से इस दमन के खिलाफ जायज गुस्से वाला प्रतिरोध कभी-कभार ही आता है. हमारी सीटू को इसका ध्यान रखना चाहिए और सभी अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों को उन कष्टों के बारे में अच्छी तरह सूचित करना चाहिए जिनमें से भारतीय मजदूर गुजर रहा है. केवल पश्चिम बंगाल व त्रिपुरा की वाम-मोर्चा सरकारों के तहत ही मजदूरों के अधिकारों की सुरक्षा है, हड़ताल के अधिकार की गारंटी है, हड़तालियों के खिलाफ दमनकारी मशीनरी इस्तेमाल नहीं की जाती और ये सरकारें मजदूरों के पक्ष में अपना पूरा जोर लगाती हैं.

वेतनों पर हमला

साथियों, हमने कई बार यह नोट किया है कि किस प्रकार सरकार सार्वजनिक प्रतिष्ठानों के ब्यूरो के माध्यम से वेतनों को नियंत्रित करने और मुद्रास्फीति व संकट का बोझ मजदूरों पर लादने की कोशिश कर रही है. सरकार के प्रोत्साहन पर अब निजी मालिकान बोनस खत्म करने तथा

महंगाई भत्ते को काफी कम करने की मांग कर रहे हैं. आल इंडिया आर्गेनाइजेशन आफ एंप्लायर्स तथा एंप्लायर्स फेडरेशन आफ इंडिया द्वारा संयुक्त रूप से तैयार किए गए एक पर्चे में कहा गया कि "बोनस व महंगाई भत्ते को खत्म कर दिया जाना चाहिए तथा खेत मजदूरों के लिए एक खास क्षेत्र के लिए न्यूनतम वेतन अस्तित्व योग्य वेतन होना चाहिए." स्वाभाविक ही है कि इस पर्चे के लेखक जरूरत पर आधारित न्यूनतम वेतन की अवधारणा को, जिस पर बहुत ही ध्यान से गौर किया जाना चाहिए, नजरअंदाज करते हैं. साथ ही न तो उचित जीवनयापन की दशाओं की गारंटी का और न ही काम की कुशलता का वेतन के साथ कोई संबंध होना चाहिए. हर तरह से पूंजी के हाजमे को उत्पादकता के स्तर, राष्ट्रीय आय आदि को संतुष्ट करने के बाद बाकी जो बचा-कुचा रह गया है वही वेतन होना चाहिए. "उद्योग की क्षमता को संपत्ति को सलामत व नवीनतम दशा में रखने के लिए प्रसाधन जुटाने की जरूरत, सालाना लाभांशों की अदायगी करने, उद्योग की वृद्धि व विकास के लिए पर्याप्त पूंजी आकर्षित करने की जरूरत को मध्येनजर रखना चाहिए." इससे कुछ भी अनकहा नहीं बचा. मालिकान का कोई भी संगठन शोषण करने का अपना दावा करने में इससे पहले इतना विपुल नहीं था. लेकिन यह प्रोत्साहन व विश्वास सरकार की नीतियों व सार्वजनिक प्रतिष्ठानों के ब्यूरो के कारण जन्मा है.

अवश्य ही यह सरकार की सहायता व प्रोत्साहन से वेतनों पर एक या दूसरी शक्ल में हमलों की पूर्व-सूचना देता है और सीटू यूनियनों को मजदूरों को पूर्व-चेतावनी देनी होगी तथा यदि मालिकान इसे शुरू करते हैं तो इसके खिलाफ लड़ने के लिए तैयार रहना होगा.

वेतनों व जीवनयापन की शर्तों पर हमलों को सरल करने के लिए सरकार जुझारू यूनियनों की वृद्धि का गला घोंटने के लिए, हड़ताल के अधिकार को कुचलने के लिए, यूनियनों के अंदरूनी मामलों में दखलअंदाजी करने के लिए और अंततः पिट्ठू यूनियनों को मनमानी मान्यता व संरक्षण के माध्यम से मजदूरों को भ्रष्ट व बिकाऊ नेताओं की करतूतों के साथ बांधने के लिए कई ट्रेड यूनियन-विरोधी विधेयकों को लागू करने पर विश्वास करती है. आप सभी यह जानते हैं कि सरकार ने यह मांग मानने से इंकार कर दिया है कि यूनियनों की मान्यता संबद्ध मजदूरों के मुक्त मतदान द्वारा तय की जाए.

कठोर कानून

फिर से इंदिरा के सत्ता में आने के बाद से ट्रेड यूनियन विरोधी विधेयकों की श्रृंखला तैयार की गई है. निवारक नजरबंदी के प्रावधान का

राष्ट्रीय सुरक्षा कानून पास किया गया और उसे हड़ताली मजदूरों व ट्रेड यूनियन नेताओं के खिलाफ इस्तेमाल किया गया. सभी तथाकथित अनिवार्य सेवाओं में हड़तालों पर रोक लगाते हुए अनिवार्य सेवा अनुरक्षण कानून पास किया गया और इसे शिक्षकों की हड़तालों सहित हड़तालों पर प्रतिबंध लगाने के लिए इस्तेमाल किया जा रहा है. सारतः इन दो कदमों ने एमर्जेंसी के दौरान के प्रावधानों व प्रतिबंधों को फिर से लागू कर दिया है. आई एल ओ की एक कमेटी ने अपना मत दिया है कि एस्मा ट्रेड यूनियन आंदोलन की स्वतंत्रता में बहुत ही ज्यादा हस्तक्षेप करता है.

ट्रेड यूनियन अधिकारों, हड़ताल के अधिकार, यूनियन बनाने के अधिकार पर हमले करते हुए चार अन्य विधेयक भी लागू किए गए हैं. औद्योगिक विवाद (संशोधन) विधेयक, अस्पताल व अन्य संस्थान (विवादों का निपटारा) विधेयक, ट्रेड यूनियन (संशोधन) विधेयक और वेतनों की अदायगी विधेयक इन सबका एक ही लक्ष्य है—हड़ताल की स्वतंत्रता सहित ट्रेड यूनियन आंदोलन की स्वतंत्रता पर हमला करना. इन सभी विधेयकों का कुल मिलाकर प्रभाव है मजदूरों के खास हिस्सों की हड़तालों पर संपूर्ण प्रतिबंध तथा अन्य सभी के अधिकारों का सारतः खात्मा. जनता के जनवादी अधिकारों के खिलाफ अधिनायकवादी मार्ग का यह एक हिस्सा है.

सम्मेलन को हमारी सभी यूनियनों व अन्य सभी संगठनों का जोरदार आह्वान करना चाहिए कि वे संसद के अन्दर व बाहर सभी जनवादी ताकतों की मदद के साथ इन विधेयकों को धराशायी करें तथा इस कार्य के लिए संसद में सभी विपक्षी पार्टियों को लामबंद करें. सरकार द्वारा एक भारी हमले की योजना बनायी जा रही है और इसको शिकस्त अवश्य दी जानी चाहिए.

साथियो, हमारी गतिविधियां, हमारी एकजुट कार्यवाहियां, हमारे संघर्ष अपने प्रभाव दिखा रहे हैं और मालिकान व सरकार के लिए अपने हमलों को कर पाना बहुत ही कठिन बना रहे हैं. 19 जनवरी (1982) की हड़ताल, तीन दिन की कोयला खदान मजदूरों की हड़ताल, भारतीय नाविकों की हड़ताल, जैसी कार्यवाहियों ने सरकारी कदमों व साजिशों के खिलाफ संघर्ष करने के प्रति मजदूरों के संकल्प को बहुत ही मजबूत किया है.

संघर्ष की कमजोरियां—नई समस्याएं

मैं यहां ट्रेड यूनियन एकता के लिए अपने संघर्ष के बारे में चर्चा नहीं करना चाहता. ट्रेड यूनियन एकता के लिए हमारे काम की पूरी रिपोर्ट कामरेड पी. राममूर्ति की रिपोर्ट में की जाएगी. मैं अपनी कुछ कमजोरियों

व नयी समस्याओं के बारे में कहूंगा जिन पर सम्मेलन को अपना मत अवश्य व्यक्त करना चाहिए.

मजदूरों के हितों की रक्षा करने में हमारी यूनियनों की जुझारू भूमिका व हमारी पहलकदमी से और ट्रेड यूनियन एकता के निर्माण में अपने लगातार संघर्ष से हम सन्तुष्ट हो सकते हैं, लेकिन हमने प्रगति में सदमें भी अनुभव किए हैं. कभी-कभी हम, लगता है, दैनिक संघर्षों में पहलकदमी खो बैठते हैं, यह अराजनीतिक नेताओं के हाथ में चला जाता है जो किसी भी राजनीतिक सिद्धांत को स्वीकार नहीं करते लेकिन जुझारूपन का दिखावा करते हैं. सीटू या सम्बद्ध राज्य यूनिटों ने इस प्रक्रिया का विश्लेषण नहीं किया है और इससे उत्पन्न स्थिति से निबटने के लिए कोई कदम नहीं उठाए हैं. बम्बई व महाराष्ट्र इस प्रक्रिया की पुरानी मिसालें हैं. लेकिन ऐसा अन्य केन्द्रों में भी पाया जाता है और भविष्य में भी इसके दोहराए जाने की सम्भावना है.

एक समय मद्रास की भी यही हालत थी लेकिन हमारे कामरेड एक-एक पग करके पहलकदमी फिर से हासिल करने तथा अपनी स्थिति पर फिर से जोर देने में कामयाब हुए थे. अगर उनके अनुभव की समीक्षा की जाए तो हो सकता है हमारे लिए बहुत ही मददगार हो.

साथियो, पहले जो कुछ मैंने कहा है उससे यह स्पष्ट है कि देश की राजनीतिक परिस्थितियों में सीटू व इसकी यूनियनों का बहुत ही कम हस्तक्षेप है. असम में सीटू यूनियनों की प्रशंसनीय भूमिका के बावजूद पश्चिम बंगाल, त्रिपुरा व केरल की वामपंथी ताकतों व पार्टियों को सीटू यूनियनों का तथा उनके नेतृत्व में जनता का समर्थन, विघटनकारी ताकतों के—पृथकतावादी, सांप्रदायिक, जातिवादी के—खिलाफ संघर्ष में, जनता के आम मुद्दों के लिए संघर्ष में, बिहार प्रेस विधेयक जैसे कदमों के खिलाफ संघर्ष में सीटू का हस्तक्षेप अगर कोई था तो, न्यूनतम ही रहा.

यदि देश के ट्रेड यूनियन आन्दोलन की भूमिका को लें तो स्थिति और भी खराब होगी. हाल ही के चुनावों में हैदराबाद जैसे आंध्र प्रदेश के औद्योगिक केन्द्रों में मतदान इस कमजोरी को बेनकाब करता है, मजदूर समुदाय ने गैर-वामपंथी पार्टियों को अपना मत दिया.

यदि इस कमजोरी को दूर नहीं किया गया तो ट्रेड यूनियन आन्दोलन बिलकुल विभागीय आन्दोलन रह जाएगा जो मजदूरों को प्रतिक्रियावादी ताकतों का खिलौना बना देगा.

तीसरी दुनिया के कई देशों में ट्रेड यूनियनें साम्राज्यवाद की चुनौती

का सीधा सामना कर रही हैं और अपने देश के खिलाफ साम्राज्यवादी साजिशों के खिलाफ संघर्ष कर रही हैं. भारत में स्थिति विपरीत है. ट्रेड यूनियन आन्दोलन का एक बड़ा हिस्सा साम्राज्यवाद के अस्तित्व को और इससे उत्पन्न हमारे देश के लिए खतरे को ही स्वीकार नहीं करता. आई एम एफ कर्ज, देश को विभाजित करने की साम्राज्यवादी साजिशों पर उन द्वारा ध्यान ही नहीं दिया जाता. इससे पहले कि यह हमारे अनुयायियों में कारगार साबित हो हमारे अपने प्रचार को भी कई गुना बढ़ाने की जरूरत है.

हमारे मजदूरों के बीच समाजवादी देशों, सोवियत संघ, पीपुल्स चीन, वियतनाम, कोरिया व अन्य के मजदूरों, जनता व सरकारों के प्रति मित्रता व प्रशंसा की गर्मजोशी भावनाओं के बावजूद अंतर्राष्ट्रीय घटनाओं के बारे में, युद्ध के खतरे के बारे में चेतना बहुत ही कम है. इस कमजोरी को दूर करना होगा.

संघर्ष के कारगर रूप

बीते बरस संकट, तालाबंदियों व हड़तालों के बरस थे.

सवाल यह है कि मजदूरों का प्रतिरोध कितना कारगर था, कितनी कारगरता के साथ सीटू ने हमले का मुकाबला किया ? तालाबंदियां व छंटनियां हजारों को उनकी नौकरियों से वंचित कर देती हैं. उनके परिवार आम जनता के हिस्से हैं. किस हद तक हम एक समाजविरोधी काम के रूप में तालाबंदी के खिलाफ जनमत जुटाने में सफल हुए हैं ? क्या हमारे संघर्ष के तरीके ने इसे मजदूर व मालिक के बीच सवाल नहीं बनाया है और समाज व जनमत किनारों पर ही खड़े रहे ? अब जो वर्ष शुरू हुआ है यह नौकरियों व आय के खिलाफ हमलों में तेजी देखेगा. अर्थव्यवस्था भयंकर स्थिति में है. आई एम एफ कर्ज, अदायगी के बकाया की दिक्कतों से उत्पन्न अधिक निर्यात की जरूरत, आई एम एफ कर्ज के तहत अधिक आयात जो पहले ही भारतीय प्रतिष्ठानों पर असर डाल रहा है, इन सबसे खर्च कम करने के इरादे के रूप में रोजगारों पर और भी अधिक हमले होंगे. क्लोजरों व जन छंटनियों से पहले किए जाने वाले मशीनीकरण, आधुनिकीकरण, स्वचालन ये सब आम बात हैं. सीटू अधिवेशन के समक्ष समस्याओं में से एक होगी कि इस हमले के खिलाफ मुकाबला करने के लिए किस प्रकार संघर्ष के उचित रूप विकसित किए जाएं. किसी का भी ऐसा केस नहीं होगा जिसमें संघर्ष के रूप को बदलने की जरूरत न हो, जिसमें मजदूर वर्ग को रणनीति बदलने की जरूरत न हो जबकि पूंजीपति अपनी नीतियां बदलते रहते हैं.

सीटू के सम्मेलन को पिछले अनुभव का अध्ययन करना होगा और नए हमले का मुकाबला करने के लिए संघर्ष के कारगर रूपों को सोचना होगा. इसे पिछले संघर्षों की, जो इसमें कोई शक नहीं कि बहादुरी के साथ लड़े गए, कारगरता का जायजा लेना होगा.

हड़तालों आदि के लिए अधिक जनवादी समर्थन जुटाने में आम उदासीनता व नाकामयाबी को सुधारना होगा.

असंगठित मजदूर

सीटू यूनियनों सहित संगठित ट्रेड यूनियन आंदोलन ने एक असफलता विकसित की है जो समूचे आंदोलन के लिए घातक व हानिकारक सिद्ध हो सकती है. सीटू के पिछले सम्मेलन के बाद के वर्षों में असंगठित उद्योगों के मजदूरों की जिन्हें कोई भी कानूनी संरक्षण प्राप्त नहीं है—उनमें से ज्यादातर महंगाई भत्ते के प्रावधान के बिना काम करते हैं—गतिविधियों में तेजी आई है. न्यूनतम वेतन कानून भी जिसे उस मामूली वेतन की गारंटी देनी होती है व्यवहारतः लागू नहीं किया जाता. यह असहाय हिस्सा आसानी से प्रतिक्रियावादियों द्वारा इस्तेमाल किए जाने के लायक है. वास्तव में संगठित आंदोलन के खिलाफ उन्हें इस्तेमाल करने के लिए कोशिशें पहले ही की जा रही हैं. यदि ट्रेड यूनियनें इस व्यापक हिस्से के प्रति ध्यान नहीं देती हैं तो वे एक उस हिस्से को पृथक करके, जो जुझारू है, बहादुर है और आम आंदोलन का शक्तिशाली जत्था बन गया है, आंदोलन को हानि पहुंचाएगी.

खेत मजदूर व किसान

कार्ल मार्क्स की मृत्यु शताब्दी के इस साल में यह याद करना विषयसंगत है कि "उन्हें (ट्रेड यूनियनों को) खेत मजदूरों जैसे सबसे कम वेतन वाले व्यावसायों के, जो असाधारण हालात द्वारा शक्तिहीन कर दिये जाते हैं, हितों की सावधानी के साथ देख-रेख करनी होगी. उन्हें समूची दुनिया को यह समझाना होगा कि उनकी कोशिशें, जो संकीर्णता व स्वार्थ से काफी दूर हैं, लाखों लाख दलितों की मुक्ती के प्रति लक्षित हैं."

भारत के ट्रेड यूनियन आन्दोलन की खतरनाक कमजोरी इसका खेत मजदूरों व किसानों से अलगाव है. यह कमजोरी एक ऐसे देश में जहां खेत मजदूर व किसान जनता का एक बहुत बड़ा बहुमत हैं, घातक होनी लाजिमी है.

वर्ष के दौरान जब मजदूर वर्ग तालाबन्दियों का सामना कर रहा था, किसानों व खेत मजदूरों को तबाह किया जा रहा था. इसके व ट्रेड यूनियनों की जिम्मेदारी के प्रति शायद ही कोई चेतना झलकती थी.

सीटू यूनियनों सहित सभी ट्रेड यूनियनें इस कमजोरी की थोड़ी या ज्यादा कसूरवार हैं. इसमें कोई शक नहीं कि इसे दूर करने के लिए कुछ कोशिशें की गयी हैं. लेकिन शुरूआत के दिनों से ही बुर्जुवा नेताओं के प्रभाव के तहत ट्रेड यूनियन चेतना में यह बुराई निर्मित है. सिवाय इसके कि वे अपनी ही मांगों के लिए कार्य करें, उन्होंने ट्रेड यूनियनों की हर गतिविधि का विरोध किया. बाकी के लिए उन्हें बुर्जुवा नेताओं के संकेत का अवश्य ही इन्तजार करना चाहिए.

यह दृष्टिकोण—आन्दोलन के अलगाव का दृष्टिकोण—अभी भी ट्रेड यूनियन आन्दोलन के एक प्रमुख हिस्से को जकड़े हुए है. सीटू के सम्मेलन को, इससे पहले कि यह आन्दोलन को इस बीमारी से मुक्त करने के लिए कदम उठा सके, इसे अपना ही घर साफ करना होगा.

महिला कामगार

ट्रेड यूनियन आन्दोलन की एक और नाकामयाबी है महिला कामगारों व उनकी मांगों को पूरी तरह नजरअंदाज करना. यह बड़े शर्म की बात है कि जब हजारों महिलाओं की छंटनी की जा रही है और उन्हें रोजगार से वंचित किया जा रहा है, सीटू व अन्य यूनियनों द्वारा शायद ही कोई प्रतिरोध या कार्यवाही की जा रही है. ट्रेड यूनियन आन्दोलन पुरुषों के ही नाम नहीं लिखा गया है. फिर भी कामगार महिलाओं की समस्याओं के प्रति नजरअंदाजी तथा उन्हें मजदूर वर्ग के सक्रिय जत्थे के रूप में आकृष्ट करने में नाकामयाबी को सामंती दृष्टिकोण से जन्मे पाखण्डी बहाने की मदद से बताया जाता है. विश्व के अन्य हिस्सों में इस भटकाव के खिलाफ ट्रेड यूनियनों ने संघर्ष शुरू कर दिया है. लेकिन भारतीय ट्रेड यूनियनें पीछे हैं. संगठित ट्रेड यूनियन आन्दोलन द्वारा नजरअंदाज की गयी कामगार महिलाओं में पहले ही भारत में प्रतिक्रियावादी ताकतों ने घुसना शुरू कर दिया है. लेकिन कर्मचारियों के कुछ संगठनों ने इस समस्या के प्रति ध्यान देना शुरू कर दिया है और यह अच्छी बात है. सीटू ने कामगार महिलाओं के लिए संघर्ष अपने पिछले सम्मेलन से शुरू किया था. इसकी पूरी समीक्षा बताएगी कि हमारी यूनियनें इस दिशा में कहां तक आगे बढ़ी हैं.

मैं नवीनतम उपलब्ध जानकारी का उल्लेख करता हूं.

16 मार्च के इन्डियन एक्सप्रेस में यह खबर छपी है : "ऊर्जा मंत्रालय के रिकार्डों के मुताबिक बिहार में 1973 में भारत कोकिंग कोल लिमिटेड की कोकिंग कोयला खदानों में 30 हजार से भी ज्यादा महिला कामगार

थीं. उनकी संख्या कम होकर 1979 में 16 हजार तथा 1982 में 12 हजार रह गयी."

"दूसरे अपनी मजदूर-विरोधी नीतियों को सम्मान देने के लिए बी सी सी एल ने अभिभावकों की नौकरी के बदले में उनके युवा पुरुष आश्रितों को रोजगार के अवसर देने के लिए एक वालंटरी योजना लागू की है. इसमें भी परिवारों के महिला सदस्यों को रोक दिया गया है. एक जनरल मैनेजर द्वारा 1979 में जारी किए गए एक नोटिस में कहा गया है कि यदि एक महिला कामगार अपनी नौकरी छोड़ती है तो कम्पनी उसके बेटे या दामाद या पति को भूमिगत भार लादने के कार्य में पीस-रेट पर नियुक्त करेगी. भूमिगत कार्य में महिलाओं को नियुक्त करने के खिलाफ प्रतिबन्ध को अब उन्हें नौकरी देने से इन्कार करने में इस्तेमाल किया जा रहा है जबकि कम्पनी ओपन कास्ट माइनिंग की तरफ जा रही है."

भर्ती किए गए नए युवा कर्मचारी

सरकार व मालिकान मजदूरों की एकजुटता को तोड़ने के लिए नई नीतियां अपना रहे हैं. वे युवा भर्तियों के खिलाफ भेदभाव करते हैं व उन्हें वर्षों तक अस्थायी रखा जाता है. आम तौर पर इस हिस्से की विशेष मांगों को नजरअंदाज करने तथा आम मुद्दों पर केंद्रित होने का रूझान पाया जाता है जो ज्यादातर काफी समय से अस्थायी मजदूरों को ही लाभ पहुंचाता है. युवा व जुझारू हिस्सा आम तौर पर हतोत्साहित हो जाता है, आम आंदोलन में विश्वास खो बैठता है और आतंकवादी व्यक्तिवादी दृष्टिकोण की कठपुतली बन जाता है. संकट व सरकार की नीतियों के कारण यह प्रक्रिया विकसित हो रही है. यह आंशिक रूप से व्यक्तिवादी नेतृत्व के पनपने की भी व्याख्या करता है. सीटू को इस विकास को भी नोट करना होगा और नई युवा भर्तियों के प्रति विशेष ध्यान देने के लिए अपनी यूनियनों का आह्वान करना होगा.

गंभीर सूखा

साथियो, पिछले साल कई राज्यों में अभूतपूर्व सूखा पड़ा जिसने इस साल की उपज की संभावनाओं को भी कम कर दिया है. सूखे से पश्चिम बंगाल, बिहार, उड़ीसा, मध्यप्रदेश, राजस्थान, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, आंध्र-प्रदेश, केरल व कर्नाटक के राज्य गंभीरता के साथ प्रभावित हुए. तमिलनाडु, महाराष्ट्र व अन्य राज्यों में यहां तक कि पीने के पानी की भी जबरदस्त कमी है. इसके अलावा उड़ीसा व गुजरात बाढ़ों व साइक्लोन से भी प्रभावित

रहे. कई राज्यों में जनता अकाल की सी स्थिति का सामना कर रही है. किसान व खेत मजदूर जमींदारों व सट्टेबाज व्यापारियों की दया पर ही रह गए हैं. स्थिति का सामना करने में इसकी बुरी तरह से नाकामयाबी तथा जनता की पीड़ा के प्रति इसकी लापरवाह गैर-जिम्मेदारी के लिए हमें कांग्रेस (आई) की भर्त्सना अवश्य करनी चाहिए. मैं पश्चिम बंगाल की वाम मोर्चा सरकार व मजदूर वर्ग को पीड़ित जनता व ग्रामीण जनता को राहत देने के लिए समय की पुकार पर खड़ा हो जाने के लिए बधाई देता हूं. मैं सीटू यूनियनों का आह्वान करता हूं कि वे अपनी वर्ग जिम्मेदारी को समझें और अपनी शक्तिशाली आवाज बुलंद करें ताकि पर्याप्त खाद्यान्न पहुंचाने व उपयुक्त ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम बनाने तथा पीड़ित जनता को राहत पहुंचाने के लिए सरकार मजबूर हो जाए.

कनफेडरेशन

सीटू ने ट्रेड यूनियन आंदोलन की एकता के लिए लगातार काम किया है. इसकी कोशिशों ने राष्ट्रीय अभियान समिति के निर्माण में सफलता प्राप्त की है. समिति की गतिविधियां, 19 जनवरी की हड़ताल, कोयला खदान मजदूरों की 3 दिन की हड़ताल एकता को मजबूत करने की दिशा में सभी महत्वपूर्ण कदम हैं. लेकिन यह जानने के लिए कि कहां तक हमारी आम गतिविधियों ने सरकारी नीतियों के निर्माण में तथा हमलों को धराशायी करने में मदद की है और कहां तक हिस्सा लेने वाले मजदूरों की चेतना में वृद्धि की है, गतिविधियों का पूरा जायजा लेना जरूरी है. राष्ट्रीय अभियान समिति का दायरा इस समय सीमित है. यह जाहिर है कि जिस तरह की राष्ट्रीय अभियान समिति का निर्माण हुआ है उससे ट्रेड यूनियन एकता की और अधिक जरूरत को पूरा नहीं किया जा सकता. यह जरूरी है कि उन फेडरेशनों व कर्मचारियों के संगठनों की सक्रिय भागीदारी हो जो अभियान समिति के आह्वानों का समर्थन करते रहे हैं. सीटू ने अपने पिछले सम्मेलन में विचार के आदान-प्रदान तथा आम समस्याओं पर विचार विमर्श करने के लिए ट्रेड यूनियन संगठनों का एक कनफेडरेशन बनाने का आह्वान किया था. राष्ट्रीय अभियान समिति के विस्तार तथा कनफेडरेशन बनाने के दोनों प्रस्तावों पर सीटू सम्मेलन को गंभीरता के साथ विचार करना होगा.

संकट, बेरोजगारी व जनता के हित में उद्योगों के कारगर प्रबंधन से सम्बन्धित नीतियों की रूपरेखा देते हुए आर्थिक स्थिति पर एक समान लिखित कार्यक्रम आन्दोलन में एकता भरने तथा जनता में विश्वास पैदा करने का रास्ता तैयार करेगा.

सरकार की श्रम व आर्थिक नीतियों में हस्तक्षेप की फौरी जरूरत को पूरी तरह समझना चाहिए. यह तब तक नहीं किया जा सकता जब तक आन्दोलन की पूरी शक्ति को लामबंद न किया जाए तथा जब तक आंदोलन में एक कामन समझ विकसित न हो. समान स्तर के आधार पर अर्थव्यवस्था व उद्योग के कार्यकलाप के प्रबन्धन में मदद करने की एकजुट इच्छा भी ट्रेड यूनियन आन्दोलन द्वारा अवश्य ही व्यक्त की जानी चाहिए. इसे ऐसा करने की अपनी इच्छा को भारतीय जनता के समक्ष घोषित अवश्य करना चाहिए और जनता को यह स्वयं जानने दो कि यह सरकार व शासक वर्ग ही हैं जो श्रम द्वारा समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारी निभाने के रास्ते में आड़े आते हैं. एकजुट ट्रेड यूनियन आन्दोलन की ओर से ऐसा आह्वान ट्रेड यूनियनों की अपनी स्व-केन्द्रीयता को दूर करने तथा समाज के प्रति जो बाकी दलित व शोषित किसानों से भरा पड़ा है अपनी जिम्मेदारी को पहचानने में सहायता करेगा.

कुछ व्यक्ति इस बारे में चिन्तित हैं कि कनफेडरेशन के पदाधिकारी आदि किस प्रकार से चुने जाएंगे, आदि, आदि. एटक के महासचिव कामरेड इन्द्रजीत गुप्ता ने भी कुछ स्पष्टीकरण मांगते हुए सीटू को एक पत्र लिखा है. यदि ट्रेड यूनियन संगठनों के एकजुट होने की जरूरत पर सहमति हो जाय तो इसका विस्तृत ब्यौरा तैयार किया जा सकता है. नाम से फर्क नहीं पड़ता. यदि किसी वैकल्पिक रूप से लक्ष्य हल होता हो तो हम संतुष्ट होंगे. लेकिन उन सभी संगठनों को लाने में सही कोशिश होनी चाहिए जिनका मजदूरों में प्रभाव है, जो ट्रेड यूनियन आन्दोलन की एकता व मजबूती के लिए बहुत ही दिलचस्पी लेती हैं तथा जो आन्दोलन के अन्दर ही एक दूसरे पर छींटा-कशी नहीं करती हैं और जो प्रगतिवादी व वामपंथी ताकतों पर हमला करने की विशेषज्ञ नहीं हैं.

सीटू की स्वतन्त्र गतिविधियां

ट्रेड यूनियन एकता व एक समान कार्यवाहियों के सम्बन्ध में सीटू का अनुभव बताता है कि सीटू की पहलकदमी तथा स्वतन्त्र गतिविधियों के बिना कामयाबी हासिल नहीं की जा सकती. सम्मेलन में इस पहलू पर जोर देना होगा व इसका परीक्षण करना होगा.

यह इसलिए और भी जरूरी है क्योंकि पार्टियों की विभिन्न विचार-धाराओं के कारण अन्यों के साथ मिलकर एकजुट संघर्ष की कुछ सीमाएं

हैं. युद्ध-विरोधी आन्दोलन के सम्बन्ध में इसे पहले ही नोट किया गया है. इन सबके कारण ही जब तक सीटू की स्वतंत्र गतिविधियां नहीं बढ़ती हैं तब तक जनता पर असर डालने वाले जनवादी मुद्दों पर, ऊंची कीमतों से जनता को बचाने जैसे आर्थिक मुद्दों में और अधिनायकवादी खतरे के खिलाफ तथा जनवाद की रक्षा में ट्रेड यूनियन आन्दोलन की दखलअन्दाजी की गारंटी नहीं दी जा सकती. ट्रेड यूनियन आन्दोलन को ज्यादा से ज्यादा इन कार्यों को करना होगा तथा जनवाद व समाजवाद के संघर्ष में अगुवा ताकत के रूप में इसे अपनी बात पर जोर देना होगा. सीटू को इस कार्य के प्रति अपनी गतिविधियों का जायजा लेना होगा.

कुछ ट्रेड यूनियनें व नेता पश्चिम बंगाल व त्रिपुरा की वाममोर्चा सरकारों—जनवाद के विकसित स्तम्भों—पर लांछन करने में श्रेष्ठ हैं. इसका विरोध करना होगा. ये सरकारें मजदूर वर्ग व जनवादी आन्दोलन की उपलब्धियां हैं और मजदूरों के अन्य हिस्सों में इनके व वामपंथी ताकतों के प्रति सीटू को समर्थन विकसित करना होगा. इसके बिना जनवाद के लिए संघर्ष को कामयाबी के साथ आगे नहीं बढ़ाया जा सकता.

सीटू को शक्तिशाली बनाओ

साथियो, यह कहने की जरूरत नहीं है कि जिन कार्यों की रूपरेखा दी गयी है उन्हें सीटू यूनियनों की जन-सदस्यता सहित सीटू को शक्तिशाली बनाये बिना, उनकी जनवादी कार्य-प्रणाली के बिना, और सीटू को एक प्रमुख केन्द्रीय संगठन बनाए बिना पूरा नहीं किया जा सकता. आप सबकी कोशिशें इस लक्ष्य की प्राप्ति में लगें ताकि हमारे देश का मजदूर वर्ग व ट्रेड यूनियनें अपनी समकालीन जिम्मेदारियों को पूरा करने के योग्य हों. □